श्रीवीतरागायनमः ।

लाला जैनीलाल जैन मालिक जैनीलाल मेशीन प्रिंटिंगप्रेसके 'श्रीजैनसिद्धान्त प्रकाशक' कार्य्यालयसहारनपुरके छपेग्रंथोंकासंक्षिप्त

॥ सूचीपत्र ॥

नोट-१ हमारीछपी एक साथकी पांच प्रति मंगानेवालोंको पांचके मूल्य में ६ और १० में १३ व १५ में २० व २५ मे ३५ और ५० में ७५ और १०० मे २०० और मिलाकर (१००) में २००) रुपयेकी भेजेंगे सब खर्च ग्राहक के जिम्मे होगा।

नोट-२ इनके सिवाय अन्य जगह के छपे हुए ग्रंथ हमारे पास हर समय विक्रयार्थ रहते हैं॥

अपने छपे जैन ग्रंथ

श्रीपद्मपुराणजी भाषावचनिका	६)
श्रीपांडवपुराण चौपाई बन्द	२॥।)
श्रीपार्श्वपुराण चौपाई ब-द	१।)
श्रीआराधनासार कथा कोष महान संग्रह	३॥)
यशोधरचरित्र	२)
शीलकथाभाषा भारामल जी कृत	।)
दर्शनकथा भारामलजी कृत	।)
चारुदत्त कथा	≡)
निशिभोजन त्याग कथा बड़ी	-)॥
निशिभोजन त्याग कथा छोटी	)॥
राजाश्रेणिक व चेलना चरित्र	≤)
श्रीकुन्दकुन्दस्वामी का कथा भाषा चौपाई बन्द	≤)
सेठ सुदर्शनकथा	)॥।
श्री अकलंकदेवकी कथा	≤)॥
होली की कथा	-)
श्रीतेरहद्वीपपूजन पाठ विधान	३॥)
गिरनार और पावागिर पूजा	-)
भाषापूजासंग्रह भादोंपाठ	१)
सप्तऋषी पूजन	)॥
शत्रुंजयगिरि पूजन गुटका	=)॥
मंगतराय भजनमाला नई	-)॥
श्यामतसिंह भजनमाला	-)
प्रभुविलास	=)
मंगीभजन पचासा अर्थात् नन्हे-लाल भजन संग्रह	।)
बालक भजन संग्रह	-)
ज्योती प्रसाद भजनमाला	=)
तनवनी कर्त्ताखंडन का फोड़	)॥
उपदेशपचीसी पुकार पचीसी	)॥
सङ्कट हरण दुखहरण वीनती	)॥
चौबीसी अखाड़ा	-)॥
बारह खड़ी सुरत	)॥

॥ विषय पत्र ॥

पदों की आंचली — पद संख्या

पदों की आवली पद संख्या

ग

थ

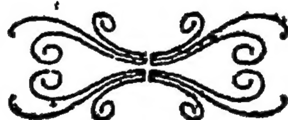
च

छ

ज

पदों की आंवली | पद संख्य

नोट—भूलसे नम्बर ८६-८७-८८ भजनों पर लगाना रहगया है।



श्रीजिनागमायनमः

॥ दौलतराम भजनसंग्रह ॥

मङ्गलाचरण स्तुति

१

दोहा

सकलज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानंद रसलीन ।
सो जिनेन्द्र जयवंतनित, अरिरजरहस विहीन ॥

पद्धरिछन्द

जय वीतराग विज्ञानपूर । जय मोहतिमिरको हरणसूर ॥
जय ज्ञान अनंतानंत धार । दृगसुखवीरज मंडित अपार ॥२॥
जय परमशांति मुद्रा समेत । भविजनको निज अनुभूति हेत ॥
भवि भागनवशजोगे वशाय । तुम धुनिह्वै सुनिविभ्रम नशाय ॥३॥
तुम गुणचिंततनिजपरविवेक । प्रगटै विघटै आपद अनेक ॥
तुम जगभूषण दूषणवियुक्त । सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥४॥
अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप । परमात्म परमपावन अनूप ॥
शुभअशुभविभावअभावकीन । स्वाभाविकपरणतिमय अछीन ॥५॥
अष्टादशदोष विमुक्त धीर । सुचतुष्टयमय राजत गंभीर ॥
मुनिगणधरादि सेवत महन्त । नव केवल लब्धि रमा धरंत ॥६॥
तुम शासन सेय अमेय जीव । शिव गये जाहिं जैहैं सदीव ॥
भवसागरमें दुख छारवारि । तारनको और न आप टारि ॥७॥
यहलख निजदुखगदहरणकाज । तुम ही निमित्त,कारण इलाज ।
जाने, तातैं मैं शरण आय । उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥८॥
मैं भ्रम्यों अपनपो विसर आप । अपनाये विधिफल पुण्यपाप ॥

निजको परको करना पिछान । परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥९॥
आकुलित भयो अज्ञान धार । ज्यों मृग मृगतृष्णा जान वार ॥
तनपरणति में आपो चितार । कबहूं न अनुभयो स्वपद सार १०
तुमको बिन जाने जो कलेश । पाये सो तुम जानत जिनेश ॥
पशुनारक नरसुरगति मझार । भव घर घर मर्यो अनंतबार ११।
अब काल लब्धिबलतैं दयाल । तुमदर्शनपाय भयो खुशाल ॥
मनशांत भयो मिट सकलद्वन्द । चाख्यो स्वातमरस दुखनिकंद ।१२
तातैं अब ऐसी करहु नाथ । बिछुरै न कभी तुव चरणसाथ ॥
तुम गुणगणको नहि छेव देव । जगतारन को तुम बिरद एव ।१३।
आतमके अहित विषयकषाय । इनमें मेरी परणति न जाय ॥
मैं रहौं आपमें आप लीन । सो करो होंहु ज्यों निजाधीन १४।
मेरे न चाह कछु और ईश । रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश ॥
मुझ कारजके कारन सु आप । शिव करहु हरहु मम मोहताप १५
शशिशांति करन तपहरन हेत । स्वमेव तथा तुम कुशल देत ॥
पीवत पियूष ज्यों रोग जाय । त्यौंतुमअनुभवतैंभवनसाय॥१६॥
त्रिभुवन तिहुंकालमझार कोय । नहिंतुमबिन निजसुखदायहोय ॥
मो उर यह निश्चय भयो आज । दुखजलधिउतारन तुमजहाज १७

दोहा ।

तुम गुणगणमणि गणपती, गणत न पावहिं पार ।
'दौल' स्वल्पमति किम कहै, नमों त्रियोग संभार ॥१८॥

२

देखोजी आदीश्वर स्वामी, कैसा ध्यान लगाया है ।
कर ऊपरिकर सुभग विराजे, आसन थिर ठहराया है, देखो ॥टेक॥

जगतविभूति भूतिसम तजकर, निजानन्दपद ध्याया है ।
सुरभिन श्वासा, आशा वासा, नासादृष्टि सुहाया है, देखोजी ॥१॥
कंचनवरन चलै मन रंच न, सुरगिर ज्यों थिर थाया है ।
जास पास अहि मोरमृगीहरि,जातिविरोध नशायाहै,देखोजी ॥२॥
शुध उपयोग हुताशनमें जिन, वसुविधि समिध जलाया है ।
श्यामलि अलिकावलि शिरसोहै,मानों धुवां उड़ायाहै,देखोजी ॥३॥
जीवन मरण अलाभ लाभ जिन, तृणमणिको समभाया है ।
सुरनरनाग नमहिंपद जाके, 'दौल'नाम जस गायाहै,देखोजी ॥४॥

३

जिनवर आनन भान निहारत,भ्रमतमघान नशायाहै,जिन०।टेक
वचनकिरनप्रसरनतैं भविजन, मन सरोज सरसाया है ।
भवदुख कारण सुखविसतारण,कुपथ सुपथ दरशाया है, जिन०॥१॥
विनसाई कँज जलसरसाई, निशिचर समर दुराया है ।
तस्कर प्रबल कषाय पलाये, जिन धनबोध चुराया है, जिन०॥२॥
लखियत उडु न कुभाव कहूं अब, मोह उलूक लजाया है ।
हंस कोककों शोक नशा निज,परिणति चकवी पायाहै,जिन०॥३॥
कर्मबंधकजकोपबंधे चिर, भवि अलि मुंचन पाया है ।
'दौल' उजास निजातम अनुभव, उर जग अंतर छायाहै,जिन०॥४॥

४

पारस जिन चरन निरख हर्ष यों लहायो, चितवत चंदा चकोर ज्यों प्रमोद पायो ॥ टेक ॥ ज्यों सुन घनघोर शोर, मोर हर्षको न ओर, रंक निधिसमाजराज पाय मुदित थायो ॥ पारस०

॥ १ ॥ ज्यों जन चिर छुधित होय, भोजन लखि सुखित होय, भेषज गद हरण पाय, सरुज सुहरषायो ॥ पारस० ॥ २ ॥ बासर भयो धन्य आज, दुरित दूर परे भाज, शांत दशा देख महा, मोहतम पलायो ॥ पारस० ॥ ३ ॥ जाके गुण जानन जिम, भानन भवकानन इम, जान 'दौल' शरण आय, शिवसुखललचायो ॥ पारस० ॥ ४ ॥

५

वंदों अदभुत चन्द्र वीर जिन, भविचकोर चित हारी ॥ वंदों० ।टेक।
सिद्धारथनृपकुलनभ मंडन, खंडन भ्रमतम भारी।
परमानंद जलधिविस्तारन, पापतापछयकारी ॥ वंदों० ॥ १ ॥
उदित निरंतर त्रिभुवन-अंतर कीरति किरण प्रसारी।
दोषमलंककलंक अटंकित, मोहराहु निरवारी ॥ वंदों ॥ २ ॥
कर्मावरण पयोधि अरोधित, बोधित शिवमगचारी।
गणधरादि मुनि उड़गन सेवत, नित पूनमतिथि धारी ॥ वंदों ॥३॥
अखिल अलोकाकाशउलंघन, जास ज्ञानउजयारी।
'दौलत, मनसाकुमुदनिमोदन, जयो चरमजगतारी ॥ वंदों० ॥४॥

६

निरखत जिनचंद्रवदन स्वपरसुरुचि आई, निरखत०॥टेक॥
प्रगटी निज आनकी, पिछान ज्ञान भानकी, कला उद्योत होत काम, यामनी पलाई, निरखत० ॥ १॥ सास्वत आनंद स्वाद, पायोविनस्यो विषाद, आनमें अनिष्ट इष्ट, कल्पना नशाई, निरखत० ॥ २ ॥ साधी निज साध्यकी, समाधि मोहव्याधकी,

उपाधिको विराधिकैं, अराधना सुहाइ, निरखत० ॥ ६ ॥ धन्न दिन छिन आज सुगुण, चिंते जिनराज अबैं, सुधरो सब काज 'दौल, अचल रिद्धि पाइ, निरखत० ॥ ७ ॥

७.

जबतें आनंद जननि दृष्टिपगी माई, तबतें संशय विमोह भमता विलाई, ॥जबतें०॥ टेक ॥ मैं हूं चित चिन्ह भिन्न, परतें पर जड़ स्वरूप, दोउनकी एकता सु, जानी दुखदाई, जबतें०॥१॥ रागादिक बंधहेत, बंधन बहु विपति देत, संवरहितजानतस, हेत ज्ञानताई, जबतें० ॥ २ ॥ सब सुखमय शिव है, तसकारन विधिझारन इम, तत्वकी विचारन, जिनवानि सुधि कराइ, जबतें० ॥ ३ ॥ विषयचाहज्वालतें, दह्यो अनंत कालतें, शुधाम्बु-स्यातपदांक गाहतें प्रशांति आई, जबतें० ॥ ४ ॥ या विन जग-जालमें, न शरन तीनकालमें, संभाल चितभजो सदीव 'दौल, यह सुहाई, जबतें० ॥ ५ ॥

८

भज ऋषिपति ऋषभेश, ताहि नित नमत अमर असुरा ।
मनमथ मथ दरसावनशिवपथ, बृषरथचक्रधुरा, भज० ॥ टेक ॥
जा प्रभुगर्भ छः मास पूर्व सुर, करी सुवर्णधरा ।
जन्मत सुरगिरधरसुरगणयुत, हरि पयन्हवन करा, भज० ॥ १ ॥
नटत नृत्यकी विलय देख प्रभु, लहि विराग सु थिरा ।
तबहि देवऋषि आय नाय शिर, जिनपदपुष्प धरा, भज० ॥ २ ॥
केवल समय जास वचरविने, जग भ्रम तिमिर हरा ।
सुदृग बोध चारित्र पोत लहि, भवि भवसिंधु तरा, भज० ॥ ३ ॥

योगसंहार निवार शेषविधि, निवसे वसुम धरा।
'दौलत, जे जाको जस गावें, ते हैं अज अमरा, भज० ॥ ४ ॥

६

जगदानंदन जिनअभिनंदन, पदअरबिंदनमूं मैं तेरे, जग० टेक॥
अरुन वरन अघपात हरनवर, वितरन कुशल सु शरन बड़ेरे।
पद्मासदन मदनमदभंजन, रंजनमुनिजनमनअलिकेरे, जग० ॥१॥
ये गुन सुन मैं सरनें आयो, मोहि मोह दुख देत घनेरे।
तामदभानन स्वपरपिछानन, तुमविन आनन कारन हेरे. जग० ॥२॥
तुमपदशरन गही जिन ही ते, जामन जरामरन निरवेरे।
तुमतें विमुख भये शठ तिनको, चहुंगतिविपतमहाविधपेरे, जग० ॥३
तुमरे अमित सुगुनज्ञानादिक, सनत मुदित गणराज उगरे।
लहत न मित मैं पतितकहों किम, किर्नशिशु कनगिरराजउखेरे॥४॥
तुम विनरागदोषदर्पन ज्यों, निज २ भाव फलै तिनकेरे।
तुम हो सहज जगत उपकारी, शिवपथसारथवाह भलेरे, जग० ॥५॥
तुम दयाल बेहाल बहुत हम, कालकरालव्याल चिर घेरे।
भाल नये गुणमाल जपों तुम, हे दयाल दुखटाल सवेरे, जग० ॥ ६॥
तुम बहुपतितसुपावन कीने, क्यों न हरो भवसंकट मेरे।
भ्रम उपाधि हर शम समाधिकर 'दौल' भये तुमरे अब चेरे जग ॥७॥

१०

पद्मासद्म पद्मपदपद्मा, मुक्तिसद्मदरशावन है।
कलिमल गंजन मन अलिरंजन, मुनिजनशरन सुपावनहै, पद्मा टेक
जाकी जन्मपुरी कुशंबिका, सुरनरनागरमावन है।
जास जन्मदिनपूरब षटनवमासरतनवरसावन है, पद्मा० ॥ २ ॥

जा तपथान पपोसा गिरि सो, आत्मज्ञानथिरथावन है।
केवलज्योतउद्योत भई सो, मिथ्यातिमरनशावन है, पद्मा० ॥ २ ॥
जाको शासन पंचानन सो, कुमतिमतंगनशावन है।
राग विना सेवकजन तारक, पैं तसु रुपतुष भावन है, पद्मा० ॥ ३ ॥
जाकी महिमाके वर्णनसों, सुरगुरुबुद्धि थकावन है।
'दौल, अल्पमतिकोकहवो जिम, शिशुक गिरिंदढकावनहै, पद्मा० ४

११

चन्द्रानन जिन चन्द्रनाथके, चरन चतुर चितध्यावतु है।
कर्मचक्रचकचूरचिदातम, चिन्मूरतपदपावतु है, चन्द्रा० ॥ टेक ॥
हाहा हूहू नारदतुंबर, जास अमल यश गावतु है।
पद्मा सची शिवा श्यामादिक, करधर बीन बजावतु है, चन्द्रा० ॥ १ ॥
बिन इच्छा उपदेशमाहिं हित, अहित जगतदरसावतु है।
जा पदतट सुर नरमुनिघटचिर, विकटविमोहनशावतु है, चन्द्रा० ॥ २ ॥
जाकी चन्द्रबरनतनद्युतिसों, कोटिक सूर छिपावतु है।
आतमज्योतउद्योतमाहि सब, ज्ञेय अनंत दिपावतु है, चन्द्रा० ॥ ३ ॥
नित्य उदय अकलंक अछीन सु, मुनिउडुचित्तरमावतु है।
जाकी ज्ञानचन्द्रिका लोकालोकमाहिं न समावतु है, चन्द्रा० ॥ ४ ॥
साम्यसिन्धुवर्द्धनजगनंदनको शिरहरिगण नावतु है।
संशय विभ्रम मोह 'दौल'कोहर जो जगभरमावतु है, चन्द्रा० ॥ ५ ॥

१२

जय जिन वासुपूज्य शिवरमणीरमन मदनदनु दारन हैं।
बालकाल संजम संभाल रिपुमोहव्यालबलमारन हैं, जयजिन० ॥ १ ॥
जाके पंचकल्यान भये चंपापुरमें सुखकारन हैं।

वासवबृंद अमंद मोद धर किये भवोदधितारन हैं, जयजिन० ॥२॥
जाके वैनसुधा त्रिभुवनजनको भ्रमरोगविदारन हैं ।
जा गुनचिंतनअमल अनल मृतजनमजरावनजारन हैं, जय० ॥३॥
जाकी अरुन शांतिछवि रविभा, दिवसप्रबोधप्रसारन हैं ।
जाके चरनशरन सुरतरुवांछित शिवफल विस्तारन हैं. जय०॥ ४ ॥
जाको शासन सेवत मुनि जे, चार ज्ञानके धारन हैं ।
इंद्रफणींद्र मुकटमणि द्युतिजल,जापदकलिल परवारनहैं,जय०॥५॥
जाकी सेव अछेवरमाकर; चहुंगतिविपति उधारन हैं ।
जा अनुभवघनसार सुआकुलतापकलापनिवारन हैं, जय०॥६॥
द्वादशमों जिनचंद्र जास वर, जस उजासको पार न हैं ।
भक्तिभारतें नमें 'दौल' कोचिरविभावदुखटारन हैं, जय० ॥७॥

१३

कुंथनके प्रतिपाल कुंथुजग, तार सारगुनधारक हैं ।
वर्जितग्रंथ कुपंथवितर्जित, अर्जितपंथ अमारक हैं, कुंथनके ॥टेक॥
जाकी समवशरनबहिरंगरमा गणधारअपारक हैं ।
सम्यग्दर्शनबोधचरणअध्यातमरमाभरतारक हैं, कुंथ० ॥ १ ॥
दशधा धर्म पोतकर भव्यनको भवसागरतारक हैं ।
वरसमाधिवनघनविभावरजपुंजनिकुंजनिवारक हैं, कुंथ०॥ २ ॥
जासु ज्ञाननभमें अलोकजुत, लोक यथा इक तारक हैं ।
जासु ध्यानहस्तावलम्ब दुखकूपविरूपउधारक हैं, कुंथ० ॥ ३ ॥
तज छखंडकमला प्रभुअमला, तपकमला आगारक हैं ।
द्वादशसभासरोजसूर भ्रमतरुअंकूरउपारक हैं,कुंथनके० ॥ ४ ॥
गुणअनंत कहि लहत अंत को ? सुरगुरुसे बुध हारक हैं ।
'दौल' नमें हे कृपाकंद ! भवद्वंदटार बहुबारक हैं, कुंथन० ॥५॥

१४

पास अनादिअविद्या मेरी हरन पास परमेशा हैं ॥
चिद्विलाससुखराशिप्रकाशवितरणत्रिभोनदिनेशा हैं, पास ॥टेक०॥
दुर्निवार कंदर्प सर्पको दर्प विदर्ण खगेशा हैं।
दुठ शठ कमठ उपद्रवप्रलय समीर सुवर्णनगेशा हैं, पास ०॥ १ ॥
ज्ञानअनंत अनंत दर्शबल, सुख अनंत पदमेशा हैं।
स्वानुभूतिरमनीवर भविभव गिरपवि शिवसदमेशा हैं, पास०॥२ ॥
ऋषि मुनि यति अनगार सदा तिस, सेवत पादकुशेसा हैं।
वदनचन्द्रतैं झरै गिरामृत, नाशन जन्मकलेशा हैं, पास० ॥ ३ ॥
नाममंत्र जे जपैं भव्य तिन, अघअहि नशत अशेसा हैं।
सुर अहमिन्द्र खगेन्द्र चन्द्रह्वै, अनुक्रम होंहिं जिनेशा हैं, पास० ॥४॥
लोक अलोक ज्ञेयज्ञायक पैं, रतिनिजभावचिदेशा हैं।
राग विना सेवक जनतारक, मारक मोह न द्वेषा हैं, पास० ॥ ५ ॥
भद्रसमुद्रविवर्द्धन अद्भुतपूरन चन्द्र सुवेशा हैं।
'दौल' नमैं पद तासजास शिव थल समेद अचलेशा हैं, पास० ।६।

१५

जयशिव कामिनिकंत वीर, भगवंत अनंतसुखाकर हैं।
विधिगिरिगंजन बुधमन रंजन, भ्रमतम भंजनभाकर हैं, जय० ॥टेक॥
जिनउपदेश्यो दुविधधर्म जो, सो सुरसिद्धरमाकर हैं।
भविउर कुमुदनिमोदन भवतप हरन अनूप निशाकर हैं, जय०॥१॥
परमविराग रहैं जगतैं पैं, जगतजंतु रक्षाकर हैं।
इन्द्र फणीन्द्र खगेन्द्र चन्द्र जगठाकर ताके चाकर हैं, जय० ॥२॥
जास अनंत सुगुणमणिगण नितगणत गणीगण थाकर हैं।

जा प्रभुपद नवकेवलि लब्धि सुकमलाको कमलाकर हैं, जय० ॥३॥
जाको ध्यान कृपान रागरुष पासहरन, समताकर हैं ।
'दौल' नमें करजोर हरनभवबाधा शिवराधाकर हैं, जय० ॥टेक॥

१६

जय श्रीवीर जिनेन्द्र चन्द्र शत इन्द्र वंद्य जगतारं, जय० ॥टेक॥
सिद्धारथकुलकमलअमलरवि। भवभूधरपविभारं ।
गुणमणिकोष अदोष मोखपति, विपिनकषाय तुपारं, जय० ॥ १॥
मदनकदन शिवसदन पदनमित, नित अनमित यति सारं ।
रमाअनंत कंत अंतक-कृतअंत जंतु हितकारं, जय० ॥ २ ॥
फंदचंदनाकन्दन दादुरदुरिततुरितनिर्वारं ।
रुद्ररचित अतिरुद्र उपद्रव पवनअद्रिपतिसारं जय० । ॥ ३ ॥
अंतातीतअचिंत्य सुगुण तुम, कहत लहत को पारं ।
हे जगमौल ,दौल' तेरे क्रम, नमें शीसकरधारं जय० ॥ ४ ॥

१७

उरगस्वर्गनरईश शीस जिस आतपत्र त्रिधरे ।
कुंदकुसमसम चमर, अमरगण ढारत मोदभरे; उरग० ॥ टेक ॥
तरुअशोक जाको अवलोकत, शोकथोक उजरे ।
पारजातसंतानकादिके, बरसत सुमन वरे, उरग० ॥ १ ॥
मणिविचित्र पीठ अंबुजपरराजत जिन सुथिरे ।
वर्णविगत जाकी धुनिको सुनि भवि भवसिंधुतरे। उरग० ॥ २ ॥
साढा बारह कोड़ जाति के बाजत तूर्य खरे ।
भामण्डलकी द्युतिअखंडने रवि शशिमन्द करे उरग० ॥ ३ ॥

ज्ञान अनन्त अनन्त दर्श बल शर्म अनन्त भरे ॥
करुणामृत पूरितपद जाके दौलत हृदय धरे उरग० ॥ ४ ॥

१८

भवनसरोरुहसूर भूरगुणपूरित अरहंता।
दुरित दोष मोष पथ घोषक करनकर्म अनन्ता भवन० ॥ टेक ॥
दर्शबोधतैं युगपत लख जाने जु भाव अनन्ता।
विगताकुल युतसुख अनंत विनअंत शक्तिवंता। भवन० ॥१॥
जात न ज्योत उद्यो तथकी रविशशिद्युति लाजंता।
तेजथोकअवलोक लगत है फोक सची कन्ता। भवन० ॥२॥
जास अनूप रूपको निरखत हरषत हैं सन्ता।
जाकी धुनिमुनि मुनि निज गुनमुन परगर उगलंता। भवन०॥३॥
दोल तोल विनयश तस वरनंत सुर गुरु अकुलंता।
नामाक्षरसुन कान स्वानसे रांक नाक गन्ता। भजन० ॥४॥

१९

हमारी वीर हरो भवपीर हमारी० ॥ टेक ॥
मैं दुख तपत दयामृत सर तुम लख आयो तुम तीर।
तुम परमेश मोक्ष मग दर्शक मोह दवानल नीर। हमारी० ॥१॥
तुम विनहेत जगतउपकारी शुद्ध चिदानन्द धीर।
गणपति ज्ञान समुद्र न लंघै तुम गुणसिंधु गहीर। हमारी० ॥२॥
याद नहीं मैं विपति सही जो धर धर अमित शरीर।
तुम गुण चिंतत नशत तथा भय ज्यों घन चलत समीर हमारी० ॥३॥
कोट वारकी अरज यही है मैं दुखसे हूं अधीर।
हरहु वेदना फन्द दौलका करत कर्म जंजीर। हमारी० ॥ ४ ॥

२०

सब मिल देखो हेली म्हारी हे त्रिसलाबाल बदन रसाल ॥टेक॥
आये जुतसमवसरन कृपाल बिचरत अभय व्याल मराल,
फलित भई सकल तरुमाल, सब० ॥ १ ॥
नैनन हाल भृकुटी न चाल, बैन विदारैं विभ्रमजाल,
छबिलखि होत संत निहाल, सब० ॥ २ ॥
बंदनकाज साज समाज संगलिये स्वजन पुरजन आज,
श्रेणिक चलत है नरपाल, सब० ॥ ३ ॥
यों कहि मोदजुत पुरबाल लखन चाली चरम जिनपाल,
'दौलत' नमत करधरभाल, सब० ॥ ४ ॥

२१

अरि रज रहस्य हनन प्रभु अरहन जैवंतो जगमें।
देव अदेव सेवकर जाकी धरहिं मौलि पगमें अरि रज० ॥ टेक ॥
जा तनअष्टोत्तरसहस्रलक्खन लखि कलिल समै।
जाबच दीप शिखातें मुनि बिचरैं शिव मारग में। अरि रज०॥ १ ॥
जास पासतैं शोकहरन गुन प्रगट भयो नगमें।
व्याल मराल-कुरंग सिंघ को जाति बिरोध गमै। अरि रज० ॥२॥
जा जसगगनउलंघन कोऊ क्षम न मुनी खग में।
'दौल' नाम तस सुरतरु हैया, भव मरुथलमगमें, अरि ० ॥३॥

२२

हे जिन तेरे मैं शरणे आया।
तुम हो परमदयाल जगतगुरु,मैंभवभव दुख पाया हे जि०॥टेक॥
मोह महादुठ घेर रह्यो मोहि भवकानन भटकाया।

नित निज ज्ञानचरननिधि विसरयो तनधनकर अपनाया। हे० ॥१॥
निजानंदअनुभवपियूषतज विषयहलाहल खाया
मेरी भूल मूल दुखदाई निमित मोह विधि थाया । हे जिन ॥२॥
सो दुठ होत सिथिल तुमरे ढिग, और न हेतु लखाया ।
शिवस्वरूप शिवमगदर्शक तुम सुयश मुनीगण गाया हेजिन० ३॥
तुमहो सहजनिमित जगहितके मोउर निश्चय भाया ॥
भिन्न होहु विधितैं सोकीजे दौल तुम्हें शिरनाया हे जिन० ॥ ४ ॥

२३

हे जिन मेरी ऐसी बुधि कीजे, हे जिन ॥ टेक ॥
राग द्वेष दावानलतैं बचि समता रसमें भीजे, हे जिन ॥ १ ॥
परमें त्याग अपनपो निजमें लाग न कबहु छीजे, हे जिन ॥२॥
कर्म कर्म फलमाहिं न राचै ज्ञान सुधारस पीजे, हे जिन ॥३॥
मुझ कारज के तुम कारन वर अरज दौलकी लीजे, हे जिन४

२४

शामरिया के नाम जपे से छूटजाय भवभामरियां, शाम० टेक॥
दुरित दुरत पुन तुरत फुरतगुन आतम की निधि आगरियां ।
विघटत है परदाह चाह झटमटकत समरस गागरियां । शाम०॥
कटत कलंक कर्म कलसायन, प्रगटत शिवपुरडागरियां ।
फटत घटाघन मोहछोंहहट, प्रगटत भेदज्ञान घरियां, शाम० ।२॥
कृपाकटाक्ष तुमारीहींसे जुगलनाग विपतहि टरियां ।
धार भये सो मुक्तिरमावर दौल' नमें तुव पागरियां, शाम०॥३॥

२५

शिवमगदरसावन रावरो दरस शिवमग० ॥ टेक ॥

परपदचाह दाहगदनाशन तुमबचभेषज पानसरस, रावरो० ॥१॥
गुणचिनवत निज अनुभव प्रगटै विघटैविधिठगदुविध तरस, रा० २
'दौल' अवाची संपति सांची पाय रहै थिरराच सरस, राव० ॥ ३॥

२६

मेरी सुधलीजे रिषभस्वाम मोहि कीजे शिवपथ गाम ॥ टेक ॥
मैं अनादिभवभ्रमतदुखी अब तुम दुखमेटत कृपाधाम ।
मोहि मोहघेरा कर चेरा पेरा चहुंगतिविपत ठाम, मेरी०॥ १ ॥
विषयन मन ललचाय हरी मुझ शुद्ध ज्ञानसंपन ललाम ।
अथवा था जड़ कौनदोष मम दुखसुखतापरनत सुकाम, मेरी० ॥२॥
भाग जगे अब चरनजपे तुम बच सुनके गहे सुगुणग्राम ।
परमविराग ज्ञानमय मुनिजन जपततुम्हारी सुगुणदाम, मेरी०॥३॥
निर्विकार संपतिकृति तेरी, छविपरवारों कोट काम ।
भव्यनकेभवहारन कारन, सहज यथा तम हरनघाम, मेरी० ॥ ४ ॥
तुम गुणमहिमा कथनकरनको, गिनत गणी निजबुद्धि खाम ।
'दौल'तणी अज्ञान परनतिको, हे जगत्रातोकर विराम, मेरी० ॥ ५॥

२७

मोहि तारोजी क्यों ना ? तुम तारक त्रिजग त्रिकालमें, मोहि० ॥टेक॥
मैं भवउदधिपड़्यो दुखभोग्यो, सो दुख जाय कह्यो ना ।
जामनमरन अनंत तनो तुम, जाननमाहिं छिप्यो ना, मोहि०॥१॥
विषयविरस रस विषम भख्यो मैं, चख्यो न ज्ञान सलोना ।
मेरी भूल मोहिदुख देवै, कर्मनिमित्त भलो ना, मोहि० ॥ २ ॥
तुम पदकंज धरे हिरदै जिन, सो भवताप तप्यो ना ।
सुरगुरुहू के वचन करनकर, तुम जस गगन नप्यो ना, मोहि० ॥३॥

कुगुरु कुदेव कुश्रुत सेये मैं, तुम मत हृदय धर्यो ना।
परमविराग ज्ञानमय तुमजाने विन काज सर्यो ना, मोहि०॥ ४॥
मो सम पतित न और दयानिधि, पतिततार तुम सो ना।
'दौल, तणी अरदास यही है फिर भववास वसो ना। मोहि० ॥ ५॥

२८

मैं आयो जिन शरन तिहारी! मैं चिरदुखीविभाव भावतें
स्वाभाविक निधि आप विसारी मैं० ॥ १ ॥
रूप निहार धार तुम गुनसुन वैन होत भविशिवमगचारी।
यों ममकारजके कारन तुम तुमरी सेव एव उरधारी मैं० ॥ २ ॥
मिल्यो अनंत जन्म में अवसर अब विनऊं हे भवमरनारी।
परमें इष्ट अनिष्ट कल्पना 'दौल' कहै झट मेट हमारी मैं० ॥३॥

२९

मैं हरख्यो निरख्यो मुख तेरो।
नासान्यस्त नयन भ्रू हलय न वयन निवारनमोहअंधेरो। मैं०॥ १ ॥
परमें कर मैं निजबुद्धि अबलों भवसरमें दुख सह्यो घनेरो।
सो दुखभानन स्वपरपिछानन तुमविन आनन कारन हेरो मैं०॥२॥
चाह भई शिवराह लाहकी गयो उछाह असंजम केरो।
'दौलत' हित विराग चित आन्यो, जान्यो रूपज्ञानदृग मेरो, मैं॥३॥

३० झंझोटी में.

प्यारी लागे म्हाने जिन छवि थारी हो, ॥ टेक ॥
परमनिराकुल पद दरसावत, वर विरागताकारी।
पटभूषन विन पैं सुंदरता, सुर नर मुनिमनहारी, प्यारी० ॥ १ ॥
जाहि विलोकत भविनिज निधिलहि, चिर विभावता टारी।

निरनिमेषतैं देख सचीपति,सुरता सफल विचारी । प्यारा० ॥२॥
महिमा अकथ होत लख ताको, पशुसम समकित धारी ।
,दौलत'रहो ताहि निरखनकी भव भवटेव हमारी । प्यारी०॥ ३ ॥

३१

निरख सुख पायो जिन मुखचंद नि० ॥ टेक ॥
मोह महातम नाश भयो है उरअंबुज प्रफुलायो ।
ताप नस्यो तब बढ्यो उदधि आनन्द । निरख० ॥ १ ॥
चकवी कुमति बिछुर अतिविलखै आतमसुधा स्रवायो ।
सिथल भयो सब विधिगणफंद । निरख० ॥ २ ॥
विकट भवोदधिको तट निकट्यो अघ तरुमूल नसायो ।
'दौल' लह्यौ अब सुपद स्वछंद । निरख० ॥ ३ ॥

३२

नाथ मोहि तारत क्यों ना ? क्या तकसीर हमारी ? नाथ ॥ टेक ॥
अंजन चोर महा अघकरता, सप्तविसनका धारी ।
वोही मर सुरलोक गयो है, वाकी कछु न विचारी, नाथ ॥ १॥
शूकर सिंह नकुल वानरसे, कौन कौन व्रतधारी ? ।
तिनके करनी कछु न विचारी, वे भी भये सुर भारी, नाथ० ॥ २ ॥
अष्टकर्म वैरी पूरबके, इन मो करी खुवारी ।
दर्शनज्ञानरतन हर लीने, दीने महादुख भारी, नाथ० ॥ ३ ॥
अवगुण माफ करे प्रभु सबके, सबकी सुध न विसारी ।
'दौलत' दास खड़ा करजोरे, तुम दाता मैं भिखारी, नाथ० ॥४॥

३३

निरख सखी ऋषिनको ईश यह, ऋषभ जिन परखिकें स्वपर

परसौंज आगे। नैननाशाग्र धरि मैनबिनसायक, मौनयुत स्वास-दिशि सुगभिकारी, निरख० ॥ १ ॥ धरासम छांतियुत नरामरख-चरनुत, विगुनगगादिमद दुरितहारी। जाम क्रमपास भ्रमनाश पंच.र। सुग वास करिप्रीतिकी रीति धारी. निरख० ॥ २ ॥ ध्या दिवगाहिं विधिदारुमजराहिं सिर, केशशुभ जिमि, धूवां दिधारी। फंने जगपंक जन रंक तिने काढ़ने किधों, जगनाह यह बांह सारी. निरख० ॥ ३ ॥ तप्त हाटकवरण, वसनबिन आभरण, खरे थिर ज्यों शिखर मेरुकारी। 'दौलको' दनशिवथौल जगमौल जे, तिन्हों करजोर वंदना हमारी, निरखो ॥ ४ ॥

३४

ध्यान कृपाणपान गहि नाशी, त्रेसठ प्रकृति अरी। शेष पचासी लागरही हैं ज्यों जेवरी जरी॥ ध्यान०॥ टेक॥ दुठ अनंगमातंगभंगकर है प्रबलंगहरी। जापदभक्ति भक्तजन दुख दावानल मेघ झरी, ध्यान० ॥ १ ॥ नवल धवल पल सोहैं कल में, क्षुध तृष व्याधि टरी। हलनन पलक अलक नख बढ़त न, गति नभ माहिं करी, ध्यान० ॥२॥ जा बिनसरनमरन जर धर धर, महा असात भरी। 'दौल' नाम पद दाम होत है, वास मुक्तिनगरी, ध्यान० ॥३॥

३५

दीठा भागन तें जिनपाला, मोह नाशने वाला, दीठा० ॥ टेक ॥
सुभग निशंक रागबिन यातैं, वसन न आयुधवाला, मोह० ॥१॥
जास ज्ञानमें युगपत भासत, सकल पदारथ माला, मोह० ॥२॥
निजमें लीन हीन इच्छापर हितमितवचन रसाला, मोह० ॥३॥
लखि जाकी छवि आतमनिधिनिज, पावत होत निहाला, मोह।४।
'दौल' जासगुण चिंतत रत है, निकट विकट भवनाला, मोह० ।५।

३६

थारा तो बैनामें सरधान घणोछै, म्हारे छविनिरखत हियसरसावै ॥
तुमधुनिघन पर चहन दहन हर, वर समता रसझर बरसावै, थारा १॥
रूपनिहारत ही बुधि है सो, निज पर चिन्ह जुदे दरसावै ।
मैं चिदंक अकलंक अमल थिर,इन्द्रियसुख दुख जड़ फरसावै.थारा २॥
ज्ञानविराग सुगुण तुम तिनकी, प्रापति हित सुरपति तरसावै ।
मुनि बड़भाग लीन तिनमें नित 'दौल' धवल उपयोगर सावै, थारा३

३७

त्रिभुवनआनंदकारी जिन छबि थारी नैन निहारी, त्रिभु० टेक॥
ज्ञान अपूरब उदय भयो अब, या दिनकी बलिहारी ।
मो उरमोद बड़ो नाथ सो, जु कथा न जात उचारी ॥त्रिभु० ॥१॥
सुन घनघोर मोर मुदऔरन ज्योंनिधि पाय भिखारी ॥
जाहि लखत झटझरत मोह रज, होय सो भव अविकारी त्रिभु०२
जाकी सुन्दरतासों पुरंदर शोभ लजावन हारी ।
निज अनुभूति सुधाछवि पुलकित बदन मदन रिपु हारी, त्रिभु०३॥
शूल दुकूल न वालमाला मुनिमन मोद प्रसारी ।
अरुणन नैनन सैनभामैनन वक नलंक सम्हारी ॥ त्रिभु० ॥३॥
तातें विधि विभाव क्रोधादि न लखियत हे जगतारी ।
पूजत पातिक पुंज पलावत ध्यावत शिवविस्तारी ॥ त्रिभु०॥ ४ ॥
कामधेनु सुरतरु चिंता मणि इकभव सुख करतारी ।
तुमछवि लखत मोदतैं जो सुर सो तुम पद दातारी ॥ त्रिभु० ॥ ५ ॥
महिमा कहत न लहत पार सुर–गुरुहूकी बुधिहारी ।
और कहै किम 'दौल' चहै इम देहु दशा तुमधारी॥ त्रिभु० ॥६॥

३८

जिन छवि तेरी यह धन जगतारन जिनछवि० ॥ टेक ॥ मूल न फूल दुकूल त्रिशूल न समदमकारन भ्रमतमवारन। जिन० ॥१॥ जाकी प्रभुताकी महिमातैं सुरनधीशता लागत सारन ॥ अवलोकत भविथोक मोख मग चरत वरत निज निधि उर धारन जिन० ॥ २ ॥ जजत भजत अघ तो को अचरज समकित पावन भावनकारन। तास सेवफल एव चहत नित 'दौल' जाके सुगुन उचारन ॥ जिन छ०॥ ३ ॥

३९

चलि सखि देखन नाभिरायघर नाचत हरिनटवा, चल० ॥ टेर ॥
अद्भुत तालमान शुभ लययुत चवत राग षटवा।। चलसखि० ॥१॥
मणिमय नूपुरादिभूषणद्युति, युत सुरंग पटवा।
हरिकर नखन नखनपैं सुरतिय, पगफेरत कटवा, चल० ॥ २ ॥
किन्नर करधर बीन बजावत, लावत लय झटवा।
'दौलत' ताहि लखे चख तृपते, सूझत शिवबटवा, चल० ॥३॥

४०

आज गिरराज निहारा, धनभाग हमारा।
श्रीसम्मेद नाम है जाको, भूपर तीरथ भारा, आज गिर० ॥टेर॥
तहां बीसजिन मुक्ति पधारे, अवर मुनीश अपारा।
आरज भूमि शिखामणि सोहै, सुर नरमुनि मन प्यारा, आज गिर० १
तहँा थिर योगधार योगीसुर, निज पर तत्व विचारा।
निज स्वभावमें लीन होयकर, सकल विभाव निवारा, आजगिर०२
जाहि जजत भवि भावनतैं जब, वभवपातिक टारा ।

जिनगुणधार धर्मधन संचो, भव दारिदहर तारा, आज गिर ॥३॥
इक नभ नव इक वर्ष माघवदि, चौदश बासर सार।
माथनाय जुतसाथ 'दौल' ने जय जय शब्द उचारा, आजगर०४

४१

आज मैं परम पदारथ पायो, प्रभु चरनन चितमें लायो, आज०टेर॥
अशुभ गये शुभ प्रगट भये हैं, सहज कल्पतरु छायो, आज १॥
ज्ञान शक्ति तप ऐसी जाकी, चेतनपद दरशायो आज० ॥२॥
अष्टकर्म रिपु जोधा जीते, शिव अंकूर जमायो, आज० ॥ ३॥

४२

नेमिप्रभुकी श्यामवरण छवि नैनन छाय रही, टेक॥
मणिमय तीनपीठपर अंबुज, तापर अधर ठही, नेम० ॥१॥
मारमार तपधार जारविधि केवल ऋद्धि लही।
चारतीस अतिशयदुति मंडित, नवदुग दोष नहीं, नेम० ॥२॥
जाहि सुरासुर नमत सतत मस्तकतै परस मही।
सुरगुरु वरे अम्बुज प्रफुलावन, अद्भुत भान सही, नेम० ॥ ३॥
धर अनुराग विलोकत जाको, दुरित नशै सब ही।
'दौलत' महिमा अतुल जासकी, कापै जात कही, नेम० ॥४॥

४३

अहो नमि जिनप नित नमत शत सुरप, कंदर्प गज दर्प नाशन प्रबल पनलपन, अहो० ॥ टेक ॥ नाथ, तुमबानि पय पान जे करत भवि, नशै तिनकी जरामरनजामनतपन, अहो नमि० ॥ १॥ अहो शिवभौन तुम चरणचिंतोन जे, करत तिन जरत जे भावी दुखद भवविपन, ॥ हे भुवनपाल तुम विशद गुनमाल, उरधरें

ते लहैं टुक कालमें श्रेयपन, अहो नमि० ॥ २ ॥ अहो गुणतूप तुम रूप चख सहम करि, लखत सन्तोष प्रापति भयो नाकपन ॥ अज, अकल तज सकल दुखदपरिगह कुगह, दुसहपरीसह सही धार व्रत सार पन, अहो० ॥ ३ ॥ पाय केवल सकल लोक करवत लख्यो, अख्यो वृष द्विधा सुनि नशत भ्रमतमझंपन। नीच कीचक कियो मीचतैं रहित जिम; दासको पास ले नाश भववास पन ॥ अहो नमि० ॥ ४ ॥

४४

प्रभु, मोरी ऐसी बुधि कीजिये, राग दोष दावानलसे बच समता रसमें भीजिये, प्रभु० ॥ टेक ॥ परमें त्याग अपनपो निजमें, लागन कबहुं छीजिये। कर्म कर्मफल माहि न राचत, ज्ञान सुधारस पीजिये, प्रभुमोरी ॥ १ ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरणनिधि, ताकी प्राप्ति करीजिये ॥ मुझ कारजके तुम बडकारण अरज 'दौल' की लीजिये, प्रभु मो० ॥ २ ॥

४५

वारी हो बधाई या शुभ साजै, विश्वसैन ऐरादेवीगृह जिन भव मंगल छाजै, वारी० ॥ टेक ॥

सब अमरेश अशेष विभवजुत, नगर नागपुर आये। नागदत्त सुर इन्द्र वचनतैं, ऐरावत सज थाये। लख जोजन शत वदन वदन वसु रद प्रति सर ठहराये। सरसरसोपन बीस नलिन प्रति, पद्म पचीस विराजै, वारी हो ॥ १ ॥ पद्मपद्मप्रति अष्टोत्तर शत ठने सुदल मनहारी। ते सब कोटि सताईसपै मुदजुत नाचत सुर नारी। नवरस गान ठान काननको, उपजावत सुखभारी।

अंकलोंखावत लंकलचावत, दुतिलखि दामनिलाजै, वारी हो० ॥२॥
गोपि गोपतिय जाय मायढिग, करी तासथुति सारी । सुखनिन्द्रा जननीको कर नमि, अंकलियो जगतारी । ले बसु मंगल द्रव्य दिशसुरीं, चलीं अग्रशुभकारी । हरखि हरी, चख सहसकरी तब जिनवर निरख नकाजे वारी हो ॥ ३ ॥ ता गजेन्द्रपैं प्रथम इन्द्रने श्रीजिनेन्द्रपधरायें ।
द्वितिय छत्रदिय तृतिय तुरीय हरि मुदधरि चमर दुराये ।
शेषशक्र जयशब्द करत नभ लंघ सुराचल छाये ।
पांडुशिला जिनथाप नची सचि, दुंदुभि कोटिक बाजे, वारी० ॥४॥
पुन सुरेशने श्रीजिनेशको, जन्मन्हौन शुभ ठानो ।
हेम कुंभ सुर हाथहिं हाथन, क्षीरोदधि जल आनो ।
बदन उदर अवगाह एक चौ, बसुयोजन परमानो ।
सहस आठकर करि हरि जिन शिरढारत जयधुनि गाजै, वारी० ५।
फिर हरिनारि सिंगार स्वामि तन, जजे सुरा जस गाये ।
पूरबली विधिकर पयाना मुदठान पिताघर लाये ।
मणिमय आंगनमें कनकासनपैं श्रीजिन पधराये ।
तांडव नृत्य कियो सुरनायक, शोभा सकल समाजे, वारी० ॥६॥
फिर हरि जगगुरुपितर तोष, शान्तेश घोष जिन नामा ।
पुत्रजन्म उत्साह नगरमें, कियो भूप अभिरामा ।
साध सकल निजनिज नियोग सुर, असुर गये निज धामा ।
त्रिपद धारि जिन चारुचरनकी, दौलत करत सदा जै, वारी० ॥७॥

५६

हेजिन! तेरो सुजस उजागर गावत है मुनिजन ज्ञानी, हेजिन० टेक
दुर्जयमोह महा भट जाने, निज वश कीने जगप्रानी ।

सो तुम ध्यान कृपानपानिगहि, ततछिन ताकी थितिभानी, हेजिन०१
सुप्तअनादि अविद्यानिद्रा, जिन जननिज सुध विसरानी।
ह्वैसचेत तिन निज निधि पायी, श्रवन सुनो जब तुमवानी, हेज २
मंगलमय तू जगमें उत्तम तुही शरन शिवमग दानी ।
तुव पदसेवा परम औषधी, जन्म जरामृत गद हानी, हे जिन०॥ ३॥
तुमरे पंच कल्यानक मांही त्रिभुवन मोद दशा ठानी ।
विष्णु विदंवर जिस्नु दिगम्बर, बुध शिव कह ध्यावत ध्यानी, हे॥४॥
सर्व दर्वगुणपरजयपरणति, तुम सुबोधमें नहिं छानी।
तातैं 'दौलदास' उरआशा, प्रगट करो निजरस सानी, हेजिन०॥५॥

४७

हे मन! तेरी को कुटेव यह करन विषयमें धावै है, हे मन०॥ टेक॥
इनहीके वश तू अनादितैं, निजस्वरूप न लखावै है।
पराधीन छिन छीन समाकुल दुरगतिविपतिचखावै है, हे मन०॥१॥
फरस विषयके कारण वारण, गरत परत दुख पावै है।
रसना इंद्रीवश झष जलमें कंटक कंठछिदावै है, हे मन०॥ २॥
गंध लोलपङ्कज मुद्रितमें, अलि निजप्रान खपावै है।
नयनविषयवश दीपशिखामें, अंग पतंग जरावै है, हे मन०॥ ३॥
करन विषय वश हिरन अरनिमें खलकर प्रान लुनावै है।
'दौलत' तज इनको जिनको भज यह गुरु शीख सुनावै है, हे०॥४॥

४८

होतुम शठ अविचारी जियरा, जिनवृषपाय वृथा खोवत हो, हो तुम०॥टेक॥ पी अनादि मदमोह स्वगुणनिधि भूल

अचेत नींद सोवत हो, हो तुम ॥ १ ॥ स्वहित सीख वच सुगुरू पुकारत क्यौं न खोल उरदृग जोवत हो । ज्ञानविसार विषय विष चाखत सुरतरु जार कनक बोवत हो; हो तुम ॥ २ ॥ स्वारथ सगे सकल जग कारन क्यों निज पाप भार ढोवत हो । नरभव सुकुल जैनवृष नौका, लह निज क्यों भव जल डोवत हो, हो तुम० ॥ ३ ॥ पुण्य पाप फल वात व्याधि वश, छिनमें हँसत छिनक रोवत हो। संयम सलिल लेय निज उरके कलिमल क्यौंन 'दौल' धोवत हो, हो तुम० ॥ ४ ॥

४६

हो तुम त्रिभुवन तारी हो जिनजी मो भव जलधि क्यों न तारतहो, टेक० अंजन कियो निरंजन तातें अधम उधार विरद धारतहो । हरि वराहम कट झट तारे मेरी वेर ढील पारत हो; हो तुम ॥ १ ॥ यों बहु अधम उधारे तुम तो; मैं कहा अधम न मुहि टारत हो । तुमको करनो परत न कछु शिवपंथ लगाय भव्यनितारतहो, हो २ । तुम छविनिरखत सहज टरै अघ गुणचिंतत विधि रजझारत हो । 'दौल' न और चहै मो दीजे जैसी आप भावनारत हो, हो तुम॥ ३ ॥

५०

मान लेय। सिख मोरी, झकै मत भोगन ओरी, मानले उ टेक० ॥ भोग भुजंग भोग सम जानो जिन इनसे रत जोरी। ते अनंत भव भीम भरे दुख, परे अधोगति पोरी; बँधे दृढ पातक डोरी; मान० ॥ १ ॥ इनको त्याग विरागी जे जन भये ज्ञान वृष धोरी; तिनसुख लह्यो अचल अविनाशी भवफांसी दई तोरी, रमैतिन संग शिवगौरी; मान० ॥ २ ॥ भोगनकी अभिलाष हरनको

त्रिजग संपदा थोरी ॥ यातैं ज्ञानानंद 'दौल' अब पिवो पियूष कटोरी, मिटै भवव्याधि कठोरी ॥ मान० ॥ ३ ॥

५१

छांड़िदे या बुधि भोरी, वृथा तनसे रति जोरी छांडि० ॥ टेक ॥
यह पर है न रहै थिर पोषत, सकल कुमलकी झोरी ।
यासे ममता कर अनादितैं बन्धो कर्मकी डोरी,
सहै दुख जलधि हिलोरी ॥ छांड़िदे या बुधि भोरी, वृथा० ॥ १ ॥
यह जड़ है तू चेतन यों ही, अपनावत बरजोरी ।
सम्यकदर्शन ज्ञान चरण निधि, ये हैं संपत तोरी,
सदा विलसो शिवगोरी, छाड़िदे या बुधि भोरी; वृथा०॥ २ ॥
सुखिया भये सदीव जीव जिन, यासों ममता तोरी ।
'दौल' सीख यह लीजे पीजे; ज्ञानपियूष कटोरी,
मिटै परचाह कठोरी ॥ छांड़िदे या बुधि भोरी; वृथा० ॥ ३ ॥

५२

भाखूं हित तेरा, सुनि हो मन मेरा, भा० ॥ टेक ॥
नर नरकादिक चारों गतिमें भटक्यो तू अधिकानी। परपरणतिमें प्रीति करी निजपरणति नाहिं पिछानी सहै दुख क्यों न घनेरा ॥ भा० ॥ १ ॥ कुगुरु कुदेव कुपंथ पंक फसि, तैं बहु खेद लहायो । शिवसुखदैन जैन जगदीपक सो तैं कबहु न पायो, मिट्यो न अज्ञान अँधेरा ॥ भा० ॥ २ ॥ दर्शन ज्ञान चरन तेरी निधि, सो विधिठगन ठगी है । पांचों इन्द्रिनके विषयन में, तेरी बुद्धि लगी है, भया इनका तू चेरा ॥ भा० ॥ ३ ॥ तू जगजाल विषै बहु उरभ्यो

अब करले सुरझेरा। 'दौलत' नेम चरन पंकजका, हो तू भ्रमर सवेरा नशै ज्यों दुख भवकेरा भा० ॥ ४ ॥

५३

मत कीज्यो जी यारी, ये भोग भुजग सम जानके मत कीज्यो० ॥ टेक ॥ भुजग डसत इकबार नसत है, ये अनंत मृतुकारी तिसना तृषा बढै इन सेये, ज्यों पीये जल खारी ॥ मत कीज्यो जी० ॥ १ ॥ रोग वियोग शोक वनको घन; समतालता कुठारी। केहरि करी अरी न देत ज्यों, त्यों ये दे दुख भारी। मत कीज्यो० ॥ २ ॥ इनमें रचे देव तरु थाये, पाये शुभ्र मुरारी। जे विरचे ते सुरपति अरचे, परचे सुख अविकारी ॥ मत कीज्यो० ॥ ३ ॥ पराधीन छिनमाहिं छीन ह्वै पापबंध करतारी। इन्हे गिनैं सुख आकमाहिं तिन, आमतनी बुधि धारी मत कीज्यो० ॥ ४ ॥ मीन, मतंग पतंग भ्रंग मृग, इनवश भये दुखारी। सेवत ज्यों किंपाक ललित, परिपाक समय दुखकारी ॥ मत कीज्यो जी० ॥ ५ ॥ सुरपति नरपति खगपति हूकी, भोग न आस निवारी। 'दौल' त्याग अब, भज विराग सुख, ज्यों पावै शिवनारी ॥ मत कीज्यो० ॥ ६ ॥

५४

सुधि लीज्यो जी म्हारी, मोहि भवदुख दुखिया जानके, सुधि० ॥ टेक ॥
तीनलोक स्वामी नामी तुम, त्रिभुनके दुखहारी।
गणधरादि तुव शरण लयी लख, लीनी सरन तिहारी, सुध० ॥ १ ॥
जो विधिअरी करी हमरी गति, सो तुम जानत सारी।
याद किये दुख होत हिये ज्यों, लागत कोट कटारी ॥ सुध० ॥ २ ॥

लब्धिअपर्यापतनिगोदमें, एक उसास मझारी।
जन्म मरन नवदुगुन विथाकी, बात न जात उचारी ॥ सुधला०॥३॥
भू जल ज्वलन पवन प्रत्येक तरु, विकलत्रय तनधारी।
पंचेंद्री पशु नारक नर सुर, विपति भरी भयकारी ॥ सुधली० ॥४॥
मोह महारिपु नेक न सुखमय, होन दई सुधि थारी।
सो दुठ मंद भयो भागनतें, पाये तुम जगतारी ॥ सुधली० ॥ ५॥
यदपि विराग तदपि तुम शिवमग, सहज प्रगट करतारी।
ज्यों रविकिरन सहज मग दर्शक, यह निमित्त अनिवारी ॥ सुधली०॥६
नाग छाग गज बाघ भील दुठ, तारे अधम उधारी।
सीसनवाय पुकारत अबके, 'दौल' अधमकी वारी ॥ सुधली० ॥७॥

५५

मत राचो धीधारी, भवरंभथंभसम जानके, मत राचो ०॥टेक॥
इंद्रजालको ख्याल मोह ठग, विभ्रमपास पसारी।
चहुंगति विपतिमयी जामें जन, भ्रमत भरत दुखभारी ॥ मत० ॥१॥
रामा मा, मा वामा, सुत पितु, सुता श्वसा, अवतारी।
को अचंभ जहां आप आपके, पुत्र दशा विस्तारी ॥ मतराचो०॥२॥
घोर नरक दुख ओर न, छोर न लेश न सुख विस्तारी।
सुरनर प्रचुर विषयजुर जारे, को सुखिया संसारी ॥ मत० ॥३॥
मंडल ह्वै आखंडल छिनमें, नृप कृमि, सघन भिखारी।
जा सुत विरह मरी ह्वै वाघिनि, ता सुत देह विदारी ॥ मतराचो०॥४॥
शिशु न हिताहितज्ञान तरुण उर, मदनदहन परजारी।
वृद्ध भये विकलांगा थाये, कौन दशा सुख कारी ॥ मतराचो०॥५॥

यों असारे लख छार भव्य भट, भये मोखमगचारी।
यातै होऊ उदास 'दौल' अब, भज जिनपति जगतारी ॥मत ॥६॥

६५

नित पीज्यो धीधारी, जिनवानी सुधासम जानके, नित पी ॥ टेक ॥
वीरमुखारविंदतैं प्रगटी, जन्मजरा गद टारी।
गौतमादिगुरु उरघट व्यापी, परम सुरुचि करतारी ॥ नित० ॥ १ ॥
सलिलसमान कलिलमलगंजन बुधमनरंजनहारी।
भंजन विभ्रमधूलि प्रभंजन, मिथ्या जलधि निवारी, नित पी० ॥ २ ॥
कल्याणकतरु उपवन धरिणी, तरणी भवजलतारी।
बंध विदारन पैनी छैनी, मुक्ति नसैनी सरी ॥ नित पी० ॥ ३ ॥
स्वपरस्वरूप प्रकाशनको यह, भानुकला अविकारी।
मुनिमन कुमुदिनि मोदन शशिभा, शम सुख सुमन सुवारी। नित ४॥
जाको सेवत बेवत निजपद, नशत अविद्या सारी।
तीन लोकपति पूजत जाको जान त्रिजग हितकारी ॥ नित० ॥ ५॥
कोटि जीभसों महिमा जाकी, कहि न सके पविधारी।
'दौल' अल्पमति केम कहै यह, अधम उधारनहारी ॥ नित ॥ ६ ॥

५१

मत कीज्योजी यारी, घिनगेह देह जड़ जानके, मतकी ॥ टेक ॥
मात तात रज वीरजसों यह, उपजी मल फुलवारी।
अस्थिमाल पलनसाजालकी, लाल लाल जलक्यारी ॥ मतकी ॥ १ ॥
कर्मकुरंगथलीपुतली यह, मूत्रपुरीष भंडारी।
चर्ममँड़ी रिपुकर्मघड़ी, धनधर्मचुरावनहारी ॥ मतकी० ॥ २ ॥

जेजेपावन वस्तु जगतमें, तेइनसर्व बिगारी।
स्वेद मेद कफ क्लेद मई वहु मदगद व्याल पिटारी, मतकी० ॥ ३ ॥
जा संयोग रोग भव तोलों ,जा बियोग शिवकारी।
बुधता सोंन ममत्व करैं यह मुढ़मतिनको प्यारी ॥ मतकी० ॥ ४ ॥
जिनपोषी ते भये सदोषी, तिनपाये दुख भारी।
जिन तपठा न ध्यान कर शोषी,तिन परनी शिवनारी ॥ मतकी०॥५॥
सुर धनु शरदज़लद जल बुद बुद, त्यों झट विनशन हारी।
यातैं भिन्न जान निज चेतन, 'दौल' होहु शमधारी ॥ मतकी०॥६॥

५८

ऐसा मोही क्यों न अधोगति जावै, जाको जिनबानी न सुहावै, ऐसा०॥ टेक ॥ वीतरागसे देव छो कर, भैरव यक्ष मनावै। कल्पलता दयालुता तजि हिंसा इन्द्रायणि बावै, ॥ ऐसा० ॥ १ ॥ गुरू निर्ग्रन्थ भेष न रूचै बहु, परिग्रही गुरू भावै। परधन परतियको अभिलाषै, अशन अशोधित खावै ॥ ऐसा० ॥ २ ॥ परकी विभव देख ह्वै सोगी, परदुख हर्ष लहावै। धर्महेतु इक दाम न खरचै, उपवन लक्ष बहावै॥ ऐसा० ॥ ३ ॥ जो गृहमें संचय बहु अघ त्यों, वनहूमें उप जावै। अम्बर त्याग कहाय दिगम्बर, बाघम्बर तन छावै ॥ऐसा० ॥ ४ ॥ आरंभ तज शठ यंत्रमंत्र करि, जनपै पूज्य मनावै। धामबाम तज दासी राखै, बाहिर मढ़ी बनावै ॥ ऐसा० ॥ ५ ॥ नाम धराय यती तपसी मन, विषयन में ललचावै। 'दौलत' सो अनंत भव भटकै, औरनको भटकावै॥ ऐसा० ॥ ६ ॥

५६

ऐसा योगी क्यों न अभयपद पावै, सो फेर न भवमें आवै।ऐसा॥टेक॥
संशय विभ्रम मोह विवर्जित, स्वपर स्वरूप लखावै।

लख परमातम चेतनको पुनि, कर्म कलंक मिटावै ॥ ऐसा योगी० ॥१॥
भवतन भोग विरक्त होय तन, नग्न सूभेष बनावै ।
मोहविकार निवार निजातम, अनुभवमें चित लावै ॥ ऐसा० ॥ २ ॥
त्रस थावर बध त्याग सदा परमाद दशा छिटकावै ।
रागादिक वश झूंठ न भाषै, तृणहुं न अदत गहावै ॥ ऐसा० ॥३॥
बाहिर नारि त्याग अंतर चिदब्रह्म सुलीन रहावै ।
परमाकिंचिन धर्मधार सो द्विविध प्रसंग बहावै ॥ ऐसा० ॥ ४ ॥
पंचसमिति त्रयगुप्ति पाल व्यवहार चरण मग धावै ।
निश्चय सकल कषाय रहित ह्वै शुद्धातम थिर थावै ॥ ऐसा० ॥ ५ ।
कुंकुम पंक दास रिपु तृण मणि व्याल माल सम भावै ।
आरतरौद्र कुध्यान बिडारे धर्मशुकलको ध्यावै ॥ ऐसा० ॥ ६ ॥
जाके सुखसमाजकी महिमा, कहत इन्द्र अकुलावै ।
'दौल' तासपद होय दास सो, अविचलऋद्धि लहावै ॥ ऐस ॥७ ॥

६०

लखोजी या जिय भोरेकी बातैं, नित करत अहितहितघातैं ।
लखोजी०॥टेक॥जिन गणधर मुनि देशव्रती समकिती सुखी नीत
जात । सो पय ज्ञान न पान करत न, अघात विषय विष खातैं ॥
लखो०॥१॥ दुखस्वरुप दुखफलद जलदसम, टिकत न छिनक
विलातैं ॥ तजत न जगत भजत पतित नित रजत न फिरत तहांतैं ।
लखो० ॥२॥ देह गेह घन गेह ठान अति, अघसंचत दिनरातैं ।
कुगति विपतिफल की न भीत निश्चिंत प्रमाददशातैं ॥लखो०॥३॥
कबहुं न होय आपनो परद्रव्यादि पृथक चतुघातैं पै अपनाय

लहत दुख शठ नभ हतन चलावत लातैं ॥ लखो० ॥४॥
शिव गृहद्वार सार नरभव यह, लहिदश दुर्लभतातैं ॥ खोवत
ज्यों मणि काग उड़ावत, रोवत रंक पनातैं ॥ लखो० ॥ ५ ॥
चिदानंद निर्द्वं स्वपदतज, अपद विपद पद रातैं ॥ कहत सुशिख
गुर गहत नहीं उर, चहत न सुख समतातैं ॥ लखो० ॥ ६ ॥
जैनवैन सुन भवि बहुभव हर, छुटे द्वंद दशातैं॥ तिनकी सुथका
सुनत न मुनत न आतम बोध कलातैं ॥ लखो०॥ ७॥ जे जन
समुझि ज्ञानदृगचारित, पावन पयवर्षा तैं। ताप विमोह हरो
तिनको जश 'दौल' त्रिभौन विख्यातैं ॥ लखो० ॥ ८॥

६१

सुनो जिया ये सतगुरूकी बातैं, हित कहत दयाल दयातैं
सुनो० ॥ टेक ॥ यह तन आन अचेंतन है तू चेंतन मिलत न
यातैं। तदपि पिछान एक आतमको तजत न हट शठतातैं
सुनो० ॥१॥ चहुंगति फिरत भरत ममताको विषय महा विष
खातैं। तदपि न तजत न रजत अभागे दृगव्रतबुद्धिसुधातैं ॥
सुनो० ॥२॥ मात तात सुत भ्रात स्वजन तुझ, साथी स्वारथ
नातैं। तू इनकाज साज गृहको सब, ज्ञानादिक मत घातैं ॥
सुनो० ॥३॥ तन,धन भोग संयोग सुपनसम, बार न लगन
विलतैं। ममत न कर भ्रमतज तू भ्राता। अनुभव ज्ञान
कलातैं सुनो ॥ ४ ॥ दुर्लभ नरभव सुथल सुकुल है जिन
उपदेश लहा तैं। 'दौल' तजो मनसों ममता ज्यों निवड़ो द्वंद
दशातोसुनो ॥५॥

६२

मोही जीव भरमतमतैं नहिं, वस्तुस्वरूप लखैहै जैसैं ॥ मो० ॥टेक ॥ जे जे जड़ चेतनकी परनति, तें अनिवार परनवैं वसैं। वृथा दुखी शठ कर विकलप यौं, नहिं परिनवैं परिनवैं ऐसैं ॥ मोही० ॥ १ ॥ अशुचि सरोग समल जड़मूरत, लखत बिलात गगनघन जैसैं ॥ सो तन ताहि निहार अपनपो चहत अबाधर है थिर कैसैं ॥ मोही० ॥ २ ॥ सुत तिय बंधु बियोगयोग यौं, ज्यौं सराय जन निकसै पैसैं ॥ बिलखत हरखत शठ अपने लखि, रोवत हँसत मत्तजन जैसैं ॥ मोही० ॥ ३ ॥ जिन रवि बैन किरन लहि जिन निज, रूप सुभिन्न कियो परमैंसैं ॥ सोजगमौल 'दौल' को चिर थित, मोहबिलास निकास हृदैसैं ॥ मोही० ॥ ४ ॥

६३

ज्ञानी जीव निवार भरमतम, वस्तुस्वरूप विचारत ऐसैं ज्ञानी० ॥ टेक ॥ सुत तियबंधु धनादि प्रगट पर, ये मुझतें हैं भिन्न प्रदेशैं । इनकी परनति है इनआश्रित, जो इन भावपरनवे वैसैं ज्ञानी० ॥ १ ॥ देह अचेतन चेतन मैं इन, परिनति होय एकसी कैसैं । पूरनगलन स्वभावधरै तन, मैं अज अचल अमल नभ जैसैं, ज्ञानी० ॥ २ ॥ पर परिनमन न इष्ट अनिष्ट न, वृथा रागरुष द्वंद्व भयेसैं । नसै ज्ञान निज फसै बंधमें, मुक्त होय समभावलयेसैं, ज्ञानी० ॥ ३ ॥ विषय चाहदवदाह नशै नहिं, बिन निज सुधा सिंधुमें पैसैं । अब निजबैन सुने श्रवनन्ततैं, मिटै विभाव करूं विधि तैसैं, ज्ञानी० ॥ ४ ॥ ऐसो अवसर कठिन पाय अब, निज

हितहेत विलंब करेसै। पछतावो बहु होय सयाने, चेतत 'दौल' छुटै भवभयसे, ज्ञानी० ॥ ५॥

६४

अपनी सुधि भूल आप आप दुख उपायो, ज्यों शुक नभ चालविसरि नलिनी लटकायो, अपनी०॥टेक॥ चेतन अविरुद्ध शुद्ध, दरशबोधमय विशुद्ध, तजिजडरसफरसरूप, पुद्गल अपना यो। अपनी०॥१॥ इन्द्रियसुखदुखमें नित, पागरागरुख में चित दायक भवविपतिवृंद, बंधको बढायो, अपनी० २ चाहदाह दाहै, त्यागो न ताह चाहै, समतासुधा न गाहै, जिन, निकट जो बतायो अपनी० ॥ ४ ॥ मानुषभव सुकुलपाय, जिनवर शासन लहाय, 'दौल' निजस्वभावभज, अनादि जो न ध्यायो ॥ अपनी० ॥४॥

६५

जीव तू अनादिहीतैं भूल्यो शिवगैलवा, जीव ०॥टेक॥ मोह मद वार पियो स्वपद विसार दियो, पर अपनाय लियो, इंद्रीसुख में रचियो, भवतैं न भयो न तजियो मन मैलवा॥ जीव०॥१॥ मिथ्या ज्ञान आचरण, धरिकर कुमरण, तीन लोककी धरण, तामें कियो है फिरण पायो न शरण न लहायो सुख शैलवा ॥ जीव ०॥२॥ अब नरभवपायो, सुथलसुकुलआयो, जिन उपदेश भायो॥ "दौल" झट छिट कायो परपरणतिदुखदायिनी चुरैलवा ॥ जीव ०॥३॥

६६

आपा नहिं जाना तूने कैसा ज्ञानधारी रे ॥ टेक॥
देहाश्रित करी क्रिया आपको मानत शिवमगचारी रे ॥ आपा०॥१॥
निजनिवेदविन घोर परीषह, विफल कही जिन सारी रे॥ आपा० ॥
शिवचाहे तो द्विविधकर्मतैं,कर निजपरणति न्यारी रे आपा० ॥३।
"दौलत" जिन निजभाव पिछान्यो तिन भवविपतिविदारीरे ।आ०।४

६७

आतमरूप अनूपम अद्भुत याहि लखें भवसिंधुतरो ॥ टेक॥
अल्पकालमें भरत चक्रधर निज आतमको ध्याय खरो ।
केवलज्ञान पाय भवि बोधे ततछिन पायो लोकशिरो ॥आ०॥१॥
या विनसमझे द्रव्यलिङ्गी मुनि उग्र तपनकर भारभरो ।
नवग्रीवकपर्यन्त जाय चिर फेर भवार्णव माहिं परो ॥आत० ॥२॥
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप येहि जगतमें सार नरो ।
पूरव शीवको गये जाहिं अब फिर जे हैं यह नियतकरो ।।आ०॥३॥
कोटिग्रन्थको सारयही है येही जिनवानी उचरो ।
"दौल" ध्याय अपने आतमको मुक्तिरमा तब वेग बरो ॥आ० ॥४॥

६८

आप भ्रमविनाश आप आप जान पायो कर्णध्रत सुवर्णजिम चिता रचैन थायो । आप० ॥ टेक॥ मेरो तन तनमय तन, मेरो में तनको, त्रिकाल योंकुबोधनश सुबोध भानु जायो॥ आप० ॥१॥ यह सुजैनवैन ऐन चिंतत पुन पुन सुनैन, प्रगटो अब भेद निज, निवेदगुण बढ़ायो ॥ आप० ॥ २ ॥ योंही चित अचित मिश्र.

ज्ञेय नाग्रहेय हेय, इंधन घनंज जैसे, स्वामियोग गायो, ॥ आप० ॥ ६ ॥ भँवर पोत छुटत झटति वांछित तट निकटत जिमि; मोह राग रूख हर जिय शिवतट निकटायो ॥ आप० ॥ ४ ॥ विमल सौख्यमय सदीव मैं हूं मैं नहिं अजीव; जोत होत रज्जुमय भुजंग भय भगायो ॥ आप० ॥५॥ यों हीं जिनचंद सुगुन चिंतत परमार्थ चुन, "दौल" भागजागोजब अल्पपूर्व आयो, ॥ आप० ॥६॥

६९

विषयोंदा मद भानै, ऐसा है कोई वे ॥ वि० ॥ टेक ॥ विषय दुःख अर दुखफल तिनको, यों नित चित्त न ठानै ॥ विष० ॥ १ ॥ अनुपयोग उपयोग स्वरूपी, तन चेतनको मानैं ॥ विष० ॥ २ ॥ वरणादिक रागादि भावतैं, भिन्न रूप तिन जानैं ॥ विष० ॥ ३ ॥ स्वपरजान रूषरागहान, निजमें निज परणति सानै, विपयोंदा० ॥ ४ ॥ अंतर बाहरको परिग्रह तजि, 'दौल' बसै शिवथानै ॥ विषयोंदा० ॥ ५ ॥

७०

और सबै जगद्वन्द मिटावो, लौ लावो जिन आगम ओरीं। और० ॥ टेक ॥ है असार जगद्वन्द्व बंधकर, ये कुछ गरज न सारत तोरी। कमला चपला यौवन सुरधनु, स्वजन पथिकजन क्यों रति जोरी ॥ और० ॥ १ ॥ विषयकषाय दुखद दोनों भव, इनतैं तोर नेहकी डोरी। परद्रव्यनको तू अपनावत, क्यों न तजै ऐसी बुधि भोरी ॥ और० ॥ २ ॥ बीतजाय सागरथिति सुरकी, नर परजाय तनी अति थोरी। अवसरपाय 'दौल' अब चूको, फिर न मिलै मणि सागर बोरी ॥ और० ॥ ३ ॥

७१

और अबै न कुदेव सहावें, जिन थांके चरनन रत जोरी। और० ॥ टेक ॥ काम कोहवश गहे अशन असि, अंक निशंक धरैं तियगोरी। औरनके किम भाव सुधारैं, आप कुभावभारधर धोरी। और० ॥ १ ॥ तुम विनमोह अकोह छोहबिन, छके शांतरस पीय कटोरी। तुम तज सेय अमेय भरी जो, जानत हो विपदा सब मोरी। और० ॥ २ ॥ तुम तज तिनैं भजै शठ जोसो, दाख न चाखत खात निमोरी। हे जगतार ? उधार 'दौल' को, निकट विकट भवजलधि हिलोरी ॥ और० ॥ ३ ॥

७२

कबधों मिलैं मोहि श्रीगुरु मुनिवर, करि हैं भवदधि पारा हो। कबधों ॥ टेक ॥ भोग उदास जोग जिन लीनो, छांड परिग्रह-भारा हो। इंद्रिय दमन वमन मद कीनो, विषय कषाय निवारो हो॥ कबधों० ॥ १ ॥ कंचन काच बराबर जाके, निंदक वंदक सारा हो। दुर्धरतपतपि सम्यक निजघर, मन वच तनकर धारा हो। कबधों० ॥ २ ॥ ग्रीषमगिरि हिमसरितातीरें, पावसतरूतर ठारा हो। करुणा-भान चीन त्रसथावर, इर्यापंथ समारा हो॥ कबधों० ॥ ३ ॥ मार मार व्रतधार शील दृढ, मोह महामल टारा हो। मास छमास उपास वासबन, प्राशुक करत अहारा हो॥ कबधों० ॥ ४ ॥ आरत-रौद्रें लेश नहिं जिनके, धर्म शुकल चित धारा हो। ध्यानारूढ़ गूढ़ निज आतम, शुध उपयोग विचारा हो॥ कबधों० ॥ ५ ॥ आप तरहिं औरनको तारहिं, भवजलसिन्धु अपारा हो। 'दौलत' ऐसे जैनजतिन को, नितप्रतिधोक हमारा हो॥ कबधों० ॥ ६ ॥

७३

कुमति कुनारि नहीं है भलीरे, सुमति नारि सुन्दर गुणवाली। कुमति० ॥ टेक ॥ वासों विरचि रचौ नित यासों, जो पावो शिव-धाम गलीरे। वह कुबजा दुखदा यह राधा, बाधा टारन करन रलीरे ॥ कुमति० ॥ १ ॥ वह कारी परसों रतिठानत, मानत नाहिं न सीख भलीरे। यह गोरी चिद्‌गुणसहचारिन, रमत सदा स्वसमाधि थलीरे ॥ कुमति० ॥ २ ॥ वासंग कुथल कुयोनि बस्यो नित, तहां महादुख बेल फलीरे। यासंग रसिक भविनकी निजमें, परिणति 'दौल' भई न चलीरे ॥ कुमति० ॥ ३ ॥

७४

गुरु कहत सीख इम बारबार, विषसम विषयनको टार टार। विष० ॥ टेक ॥ इन सेवत अनादि दुख पायो, जनम मरण बहु धार धार। विष० ॥ १ ॥ कर्माश्रित बाधा जुत फांसी, बंधबढ़ावन द्वंदकार ॥ विष० ॥ २ ॥ ये न इन्द्रिके तृप्तिहेतु जिम, तिस न बुझावत क्षारवार ॥ विष० ॥ ३ ॥ इनमें सुख कल्पना अबुधके, बुधजन मानत दुख प्रचार, विष० ॥ ४ ॥ इन तजि ज्ञानपियूष चख्यो तिन, 'दौल' लही भववार पार, विष० ॥ ५ ॥

७५

घड़ि घड़ि पल पल छिन छिन निशदिन, प्रभुजीका सुमरण करले रे ॥ घड़ी० ॥ टेक ॥ प्रभु सुमरेत पाप कटत हैं, जन्म मरण दुख हरले रे ॥ घड़ि घड़ि० ॥ १ ॥ मन वचकाय लगाय चरणचित, ज्ञान हिये विच धरले रे ॥ घड़ि घड़ि० ॥ २ ॥ दौलतराम, धर्मनौकाचढ़ि, भवसागरतैं तिरले रे ॥ घड़ि घड़ि० ॥ ३ ॥

१६

चिन्मूरत दृग्धारीकी मोहि रीति लगत है अटापटी । चिन्मू० ॥टेक॥
बाहिर नारकिकृतदुख भोगें, अंतर सुख रस गटा गटी ।
रमत अनेकसुरनसंगपैं तिस, परणतितें नित हटाहटी। चिन्मू० ॥१॥
ज्ञान विराग शक्तितें विधिफल, भोगत पैं विधि घटाघटी ।
सदननिवासी तदपि उदासी, तातैं आस्रव छटाछटी ॥ चिन्मू० ॥२॥
जे भवहेतु अबुधके ते तस, करत बन्धकी झटाझटी ।
नारक पशू तिय षण्ट विकलत्रय, प्रकृतिनकी ह्वै कटाकटी ॥ चि०॥३॥
संयमधरन सकै पैं संयम-धारनकी उर चटा चटी ।
तास सुयशगुणकी 'दौलत'के, लगी रहै नित रटारटी ॥ चि० ॥ ४ ॥

१७

चेतन यह बुधि कौन सयानी, कही सुगुरुहित सीख न मानी, ॥ टेक ॥ कठिन काकताली ज्यों पायो, नर भव सुकुल श्रवण-जिनबानी ॥ चेतन० ॥१॥ भूमि न होत चांदनी की ज्यों, त्यों नहिं घनी ज्ञेयको ज्ञानी । वस्तुरूप यों तू यों ही शठ, हटकर पकरत सोंज बिरानी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ ज्ञानी होय अज्ञान राग-रुष, कर निज सहज स्वच्छता हानी । इन्द्रिय जड़ तिनविषय अचेतन, तहां अनिष्ट इष्टता ठानी। चेतन० ॥ ३ ॥ चाहै सुख दुख ही अवगाहै, अब सुनि विधि जो है सुखदानी । 'दौल' आपकरि आप आपमें, ध्यायल्याय लय समरस सानी ॥चेतन०॥४॥

१८

चेतन कौन अनीति गहीरे, न मानै सुगुरु कहीरे । चेतन० ॥
जिन विषयनवश बहुदुख पायो, तिनसों प्रीति ठहीरे, चेतन० ॥१॥

चिन्मय है देहादि जड़नसों, तो मति पागि रही रे । सम्यग्दर्शनज्ञानभाव निज, तिनको गहत नहीं रे॥ चेतन० ॥ २॥ जिनवृष पाय विहाय रागरुष, निजहितहेत यही रे । 'दौलत' जिन यह सीख धरी उर, तिन शिव सहज लही रे॥ चेतन० ॥ ३ ॥

७६

चेतन तैं योंही भ्रम ठान्यों, ज्यों मृग मृगतृष्णाजल जान्यो । ॥ टेक ॥ ज्यों निशितम में निरख जेवरी, भुजग मान नर भय उर आन्यो ॥ चेतन० ॥ १ ॥ ज्यों कुध्यान वशि महिष मान निज, फंसि नर उरमाहीं अकुलान्यों । त्यों चिर मोह अविद्या पेर्‌यो, तेरो तैं ही रूप भूलान्यो ॥ चेतन० ॥ २॥ तोय तेल ज्यों मेल न तनको, उपज खपजमें सुखदुख मान्यो। पुनि परभावनको करता है, तैं तिनको निज कर्म पिछान्यो॥ चेतन० ॥ ३ ॥ नरभव सुथल सुकल जिनवानी, काललब्धिबल योग मिलान्यो। 'दौल' सहज भज उदासीनता, तोष रोष दुखकोष जु भान्यो ॥ चेतन ॥४॥

८०

चेतन अब धरि सहजसमाधी, जातेंयह विनशै भवव्याधी, चेतन० ॥ टेक ॥ मोह ठग्योरी खायके रे परको आपा जान । भूल निजातम ऋद्धकोतें, पाये दुःख महान, चेतन० ॥ १ ॥ सादि अनादि निगोद दोयमें, पर्‌यो कर्मवश जाय। श्वासउश्वासमभार तहां भव, मरन अठारह थाय॥ चेतन० ॥२॥ कालअनंत तहां यों वीत्यो, जब भई मंद कषाय। भू जल अनिल अनल पुन तरु है, काल असंख्य गमाय ॥चेतन० ॥३॥ क्रमक्रम

निकसि कठिन तैं पाई, शंखादिक पर जाय। जल थल खचर होय अघ ठाने, तसवश शुभ्र लहाय ॥ चेतन० ॥ ४ ॥ तित सागर लों बहु दुख पाये, निकस कबहु नर थाय। गर्भ जन्मशिशुतरुणवृद्ध दुख, सहे कहे नहिं जाय॥ चेतन० ॥ ५ ॥ कबहूं किंचित पुण्य-पाकतें, चउविधि देव कहाय। विषय आश मनत्रासलही तहँ, मरण समय विललाय ॥ चेतन० ॥ ६ ॥ यों अपार भवखारवार में, भ्रम्यो अनंते काल। 'दौलत' अब निजभाव नावचढ़ि, लै भवाब्धिकी पाल ॥ चेतन० ॥ ७ ॥

८१

जिन रागदोषत्यागा वह सतगुरू हमारा ॥ जिनराग० ॥ टेक ॥
तज राज रिद्ध तृणवत निज कार्य्य संभारा ॥ जिनराग० ॥ १ ॥
रहता है वह वनखंडमें, धर ध्यान कुठारा।
जिन मोह महा तरुको, जड़मूल उखारा ॥ जिनराग० ॥ २ ॥
सर्वाङ्गतज परिग्रह, दिग अंबरधारा।
अनंतज्ञानगुणसमुद्र, चारितभंडारा ॥ जिनराग० ॥ ३ ॥
शुक्लाअग्निको प्रजाल के वसुकानन जारा।
ऐसे गुरुको 'दौल' है नमोऽस्तु हमारा ॥ जिनराग० ॥ ४ ॥

८२

चिदरायगुण सुनो सुनो,प्रशस्त गुरु गिरा।
समस्त तज विभाव हो स्वकीयमें थिरा ॥ चिद० ॥ टेक ॥
निजभावके लखावविन, भवाब्धि में परा।
जामन मरण जरा त्रिदोष, अग्निमें जरा ॥ चिद० ॥ १ ॥
फिरसादि औ अनादि दो, निगोद में परा।

तहँ अंकके असंख्य भाग, ज्ञान ऊबरा ॥ चिद० ॥ २ ॥
तहां भव अंतर मुहूतके, कहे गणेश्वरा।
छयासठसहस त्रिशत, छत्तीस जन्म घर मरा, चिद० ॥ ३ ॥
यों वशि अनंत काल फिर, तहांतें नीसरा।
भूजल अनिल अनल प्रत्येक तरुमें तनुधरा, चिद० ॥ ४ ॥
अनुधरीसु कुंथ कान मच्छ अवतरा।
जल थल खचर कुनर नरक, असुर उपज मरा, चिद० ॥ ५ ॥
अबके सुथल सुकुल सुसंग बोध लहि खरा।
'दौलत' त्रिरत्नसाध लाध, पद अनुत्तरा, चिद० ॥ ६ ॥

८३

चितचितके चिदेश कब अशेष पर बमूं। दुखदा अपार विधिदुचारकी चमूदमूं, चितचिं० ॥ टेक ॥ तजि पुण्यपाप थाप आप आप में रमूं। कब राग आग शर्मबागदागनी शमूं, चितचितकें ० ॥ १ ॥ दृगज्ञानभानतें मिथ्या अज्ञान तम दमूं। कब सर्व जीव प्राणि भूत सत्वसों छमूं ॥ चितचितकें० ॥ २ ॥ जल-मल्ललिप्त कल सुकल सुबल्लपरिणमूं। दलकें त्रिशल्लमल्ल कब अटल्लपदमूं ॥ चितचितकैं० ॥ ३ ॥ कब ध्याय अज अमरको फिर न भवविपिनभमूं। जिनपूर कौल 'दौल'को यह हेतु हैं नमूं, चितचितकैं० ॥ ४ ॥

८४

जिन छवि लखत यह बुधि भयी ॥ जिन० ॥ टेक ॥
मैं न देह चिदंकमह तन, जड़ फरसरसमयी, जिनछवि० ॥ १ ॥
अशुभ शुभ फल कर्म दुखसुख, पृथकता सब गयी।

रागदोषविभाव चालित, ज्ञानता थिर थयी ॥ जिनछवि० ॥ २ ॥
परिगह न आकुलतादहन, विनसि शमता लयी ।
'दौल' पूरवअलभ आनँद, लह्यो भवथित जयी ॥ जिन० ॥३॥

८५

जिनवैन सुनत मोरी भूल भगी । जिनवैन० ॥ टेक ॥
कर्मस्वभाव भावचेतनको भिन्न पिछानन सुमति जगी ॥जिन० ॥१॥
निजअनुभूति सहज ज्ञायकता सो चिर रुषतुषमैल पगी ॥
स्यादवाद धुनि निर्मल जलतैं विमल भयी समभाव लगी ॥जि०॥ २॥
संशयमोह भरमता विघटी प्रगटी आतमसोंज सगी ।
'दौल' अपूरब मंगलपायो शिवसुख लेनहोंस उमगी ॥ जि० ॥ ३ ॥

८६

राचि रह्यो परमहिं तू अपनो रूप न जानै रे राचि रह्यो० ॥ टेक ॥ अविचल चिन्मूरत विनमूरत सुखी होत तस ठानै रे ॥ राचि रह्यो० ॥१॥ तन धन भ्रात तात सुत जननी तू इनको निज जानै रे । ये पर इनहिं वियोग योग में योंही सुख दुख मानै रे राचि० ॥ २ ॥ चाह न पाये पाये तृष्णा सेवत ज्ञान जघानै रे । विपति खेत विधिबंध हेत पैं जान विषय रस खानै रे ॥ राचि० ॥ ३ ॥ नरभव जिनश्रुत श्रवणपाय अब कर निज सुहित सयानै रे । दौलत आतम ज्ञान सुधारस पीवो सुगुरु बखानै रे । राचि रह्यो० ॥ ४ ॥

९०

तू काहेको करत रति तनमें यह अहितमूल जिम कारासदन, तू काहेको० ॥ टेक ॥ चरमपिहित पल रुधिरलिप्तमल द्वारस्रवै छिनछिनमें ॥ तू काहेको० ॥१॥ आयुनिगड फंसि विपति भरै सो क्यों न चितारत मनमें। तू काहेको० ॥२॥ सुचरण लाग त्याग अब याको जो न भ्रमें भववनमें ॥ तू काहेको० ॥३ 'दौल' देहसों नेह देहको हेतु कह्यो ग्रंथनमें। तू काहेको० ॥ ४ ॥

९१

धन धन साधर्मी जनमिलनकी घरी, बरसत भ्रमताप हरन ज्ञानघनझरी ॥ टेक ॥ जाके बिन पाये भवविपति अति भरी निजपरहित अहितकी कछू न सुध परी ॥ धन० ॥ १ ॥ जाके परभाव चितसुथिरता करी संशय भ्रम मोहकी सुवासना टरी॥ धन ॥ २ ॥ मिथ्या गुरुदेवसेव टेव परिहरी वीतरागदेव सुगुरुसेव उरधरी धन० ॥ ३ ॥ चारों अनुयोग सुहित देश दिठपरी शिवमग के लाहकी सुचाह विस्तरी धन० ॥ ४ ॥ सम्यक तरुधरनि येह करन करि हरी। भवजलको तरनि समर भुजगविषजरी धन ॥ ५ ॥ पूरबभव या प्रसाद रमनि शिववरी, सेवो अब दौल याहि बात यह खरी ॥ धन ॥ ६ ॥

९२

धनि मुनि जिनकी लगी लौं शिवओरनै, धनि ॥ टेक ॥ सम्यग्दर्शनज्ञानचरननिधि धरत हरत भ्रमचोरनै ॥ धनि० ॥ १॥ यथाजातमुद्राजुत सुंदर सदन विजन गिरिकोरनै, तृण कंचन अरि स्वजनगिनत्त सम निंदन और निहोरनै ॥ धनि० ॥ २ ॥

भवसुखचाह सकल तजि बल सजि करत द्विविध तप घोरनै ।
परमविरागभाव पवितैं नित चूरत करम कठोरनै ॥ घनि० ॥ ३ ॥
छीन शरीर न हीन चिदानन मोहत मोह झकोरनै । जगतपहर भविकुमुदनिशाकर मोदन दौल चकोरने ॥ घनि० ॥ ४ ॥

९३

धुनि मुनि जिन यह भाव पिछाना, घनि मुनि० ॥ टेक ॥
तनव्यय बांछित प्रापति मानी, पणयउदय दुख जाना ॥ घनि ।१।
एकविहार सकल ईश्वरता, त्याग महोत्सव माना ।
सब सुखको परिहार सारसुख, जानि रागरुषभाना ॥ घनि० ।२।
चितस्वभावको चिंत्य प्राणनिज; विमलज्ञान दृगसाना ।
'दौल' कौन सुख जान लह्यो तिन करो शांतिरसपाना ॥ घनि० ।३।

९४

घन मुनि निज आतमहित कीना, भव असार तन अशुचि विषय विष जान महाव्रत लीना । घन मुनि जिन आतमहित कीना ॥ टेक ॥ एकाविहारी परिगहछारी, परीसहसहत अरीना पूरबतन तप साधनै मान न, लाज गनी परवीना ॥ घनमुनि० १ ॥ शून्य सदन गिर गहन गुफामें, पदमासन आसीना । परभावन तैं भिन्न आप पद, ध्यावत मोहविहीना ॥ घनमुनि०।२। स्वपरभेद जिनकी बुधि निजमें, पागी बाह्यलगीना । 'दौल' तास पदवारिजरजने, किस अघ करे न छीना ॥ घनमुनि० ३

९५

निपट अयाना तैं आपा नहि जाना, नाहक भरम भुलाना वे, निपट० ॥ टेक ॥ पीय अनादि मोहमद मोह्या, परपद में निज

माना वे ॥ निपट० ॥ १ ॥ चेतन चिन्ह भिन्न जड़तासों, ज्ञान दरशरससाना वे । तनमें छिप्यो लिप्यो न तदपि ज्यों, जलमें कजदल मानावे, ॥ निपट० ॥ २ ॥ सकलभावनिज निजपरणतिमय, कोइ न होय विरानो वे । तू दुखिया परकृत्यमान ज्यों, नभताड़न श्रम ठाना वे ॥ निपट० ॥ ३ ॥ अजगण में हरि भूल अपनपो भयो दीन हैराना वे । 'दौल' सुगुरुधुनि सुनि निजमें निज, पाय लह्यो सुखथाना वे ॥ निपट० ॥ ४ ॥

९६

निजहितकारज करना रे भाई० ॥ टेक ॥
जन्ममरण दुखपावत यातें, सो विधि बंध कतरना ॥ रेभाई० ॥ १ ॥
ज्ञानदरस अरु रागफरसरस, निजपरचिन्ह भ्रमरना ।
संधि भेद बुधिछैनीतैं कर, निजगहि परपरिहरना ॥ रेभाई० २
परिग्रही अपराधी संकै, त्यागी अभय विचरना ।
त्यों परचाह बंधदुखदायक, त्यागत सब सुखभरना ॥ रे भाई० ३
जो भवभ्रमण न चाहे तो, अब सुगुरुशीख उर धरना ।
'दौलत' स्वरस सुधारसचाखो, जो विनसै भवमरना ॥ रेभाई० ४

९७

मनवचतनकर शुद्ध भजो जिन, दाव भला पाया । अवसर फेर मिले नहिं ऐसा, यों सतगुरगाया ॥ मनवच० ॥ टेक ॥ वस्यो अनादि निगोद निकशि फिर, थावर देह धरी । काल असंख्य अकाज गमायो, नेक न समझ परी ॥ मनवच० १ ॥ चिंतामणि दुर्लभ लहिये ज्यों, त्रसपरजायलही । लटपिपील अलिआदि जन्ममें, लह्यो न ज्ञान कहीं ॥ मनवच० ॥ २ ॥

पंचेंद्रिय पशु भयो कष्टतैं, तहां बोध न लह्यो । स्वपरविवेकरहित विन संयम, निशदिन भार बह्यो । मनबच० ॥ ३ ॥ चौपथ चलतरतन लहिये ज्यों, मनुषदेह पाई । सुकुल जैनबृष सतसंगत यह, अति दुर्लभ भाई ॥ मनबच० ॥ ४ ॥ यों दुर्लभ नरदेह कुधी जो विषयन संग खोवैं । ते नर मूढ़ अजान सुधारस पाय पांव धोवैं, मनबच० ॥ ५ ॥ दुर्लभनरभवपाय सुधी जे, जैनधर्म सेवें, दौलत ते अनंत अविनाशी, सुख शिवका वेवैं ॥ मनबच० ॥ ६ ॥

९८

मोहिडारे जिय हितकारी न सीख सम्हारे ।
भवबनभ्रमत दुखी लखि याको, सुगुरु दयाल उचारैं ॥ टेक ॥
विषय भुजंगमसंग न छोडत, जो अनंतभव मार ।
ज्ञान विराग पियूष न पीवत, जो भवव्याधिविडारैं ॥ मोहि० ॥१॥
जाके संग दुरैं अपने गुण, शिवपद अंतर पारैं ।
ता तनको अपनाय आप चिन, मूरतको न निहारैं ॥ मोहि० ॥२॥
सुत दारा धन काजसाज अघ, आपनकाज विगारैं ।
करत आपको अहित आपकर, लय कृपाण जलदारैं ॥ मोहि० ।३।
सही निगोद नरक की वेदन, वे दिन नाहि चितारैं ।
'दौल' गई सो गई अब हू तर, धर दृग चरण सम्हारैं रे ॥ मोहि० ॥४॥

९९

मेरे कब है वा दिनकी सुघरी, मेरो० ॥ टेक ॥
तन बिनवसन असनबिन वन में, निवसों नासादृष्टिधरी, मेरे० १॥
पुण्यपापपरसों कब विरचों, परचों निजनिधि चिरविसरी ।
तज उपाध सजि सहजसमाधी, सहों घामहिममेघझरी, मेरे० ॥२॥

कब थिरजोग धरों ऐसों मोहि, उपल जान मृग खाज हरी।
ध्यानकमानतान अनुभवसर, छेदों किहि दिन मोह अरी॥ मेरे०२
कब तृणकंचन एक गनों अरु, मणिजड़ितालय शैलदरी।
'दौलत' सतगुरुचरनसेव जो, पुरवो आश यहै हमरी॥ मेरे० ३

१००

लाल कैसे जावोगे, असरनसरन कृपाल। लाल०॥ टेक॥
इक दिन सरस वसंतसमयमें, केसवकी सब नारी। प्रभुप्रदच्छणा रूप खरी ह्वै, कहत नेम परवारी॥ लाल० ॥ १॥ कुंकुमलै मुखमलत रुकमनी, रङ्गछिरकत गांधारी। सतभामा प्रभुओर जोर कर, छोरत है पिचकारी॥ लाल०॥ २ ॥ व्याह कबूल करो तो छूटो, इतनी अरज हमारी। ओंकार कहकर प्रभु मुलके, छाड़ दिये जगतारी॥ लाल०॥ ३॥ पुलकित बदन मदन पितु भामिनि, निज निज सदनसिधारी। 'दौलत' जादवबंश व्योम शशि, जयो जगत हितकारी॥ लाल०॥ ४॥

१०१

शिवपुरकी डगर समरससों भरी, सो विषयविरसरचि चिरवि सरी॥ शिव०॥टेक॥ सम्यकदरशबोधव्रतमय भव, दुखदावानल मेघझरी॥ शिवपुर०॥ १॥ ताहि न पाय तपाय देह बहु, जनम मरन कर विपति भरी। कालपाय जिनधुनिसुनि मैं जब, ताहि लहूं सोइ धन्य घरी॥ शिव०॥ २॥ ते जन धनिया माहिं चरत नित, तिन कीरतिसुरपति उचरी॥ विषयचाह भवराह त्याग अब 'दौल' हरो रजरहसिअरी। शिवपुर०॥ ३॥

१०२

तोहि समझायो सौ सौ बार, जिया तोहि समझायो रे सौ सौ बार० ॥ टेक ॥ देख सुगुरुकी परहितमें रति, हितउपदेश सुनायो रे ॥ सौ सौ बार० ॥ १ ॥ विषयभुजंगसेय सुखपायो, फुनि तिनसों लपटायो रे। स्वपदविसार रच्यो परपद में, मदरत ज्यों बोरायो रे ॥ सौ सौ बार० ॥ २ ॥ तन धन स्वजन नहीं हैं तेरे, नाहक नेह लगायो रे। क्यों न तजै भ्रम, चाख समामृत, जो नित संतसुहायो रे ॥ सौ सौ बार० ॥ ३ ॥ अबहूं समझ कठिन यह नरभव, जिनबृष विना गमायो रे। ते विलखैं मणिडार उदधि में, "दौलत" को पछतायो रे ॥ सौ सौ० ॥ ४ ॥

१०३

न मानत यह जिय निपट अनारी, सीखदेत सुगुरु हितकारी न मानत० ॥ टेक ॥ कुमतिकुनारिसंग रतिमानत, सुमतिसुनारि विसारी ॥ न मानत० ॥ १ ॥ नरपरजायसुरेश चहैं सो, चख विषविषय विगारी। त्याग अनाकुल ज्ञान चाहपर, आकुलता विस्तारी ॥ न मानत० ॥ २ ॥ अपनी भूल आप समतानिधि; भव दुख भरत भिखारी। परद्रव्यनकी परणतिको शठ; बृथा बनत करतारी ॥ न मानत० ॥ ३ ॥ जिस कषायदवजरत तहां अभिलाष छटाघृतडारी। दुखसों डरै करै दुखकारनत, नित प्रीति करारी। न मानत० ॥ ४ ॥ अतिदुलभ जिनवैन श्रवणकर, संशय मोह निवारी। "दौल" स्वपरहित अहितजानके हो वहू शिवमगचारी। नमानत० ॥ ५ ॥

१०४

जिनवानी जान सुजान रे जिनवानी० ॥ टेक ॥
लागरही चिरतैं विभावता ताको कर अवसान रे ॥ जिनवा० ॥१॥
द्रव्यक्षेत्र अरकालभावकी कथनीको पहचान रे।
जाहि पिछाने स्वपर भेद सब जाने परत निदानरे। जिनवानी०॥२॥
पूरब जिन जानी तिनहीने भानी संसृतवान रे।
अब जाने अरु जानैंगे जे ते पावशिवथान रे॥ जिनवानी०॥३॥
कह 'तुषमाष' मुनि शिवभूती पायो केवल ज्ञान रे।
यों लखि 'दौलत' सतत करो भवि चिद्वचनामृतपान रे॥ जि० ॥४॥

१०५

जम आन अचानक दावैगा जम आ० ॥ टेक ॥ छिनछिन कटत घटत थित ज्यों जल अंजुलिको झरजावैगा। जम आन० ॥ १ ॥ जन्म तालतरुतैं पर जियफल कोलग बीच रहावैगा। क्यों न विचार करै नर आखिर मरणमही में आवैगा। जम आन० ॥ २ ॥ सोवत मृत जागत जीवत ही श्वासा जो थिर थावैगा। जैसे कोऊ छिपै सदासौं कबहू अवशि पलावैगा। जम आन० ॥ ३ ॥ कहूं कबहुं कैसें हू कोऊ अंतकसे न बचावैगा। सम्यगज्ञान पियूषपियेसैं 'दौल' अमरपद पावैगा। जम आन० ॥ ४ ॥

१०६

छाड़त क्यों नहीं रे हेनररीति अयानी, बारबार सिखदेत सुगुरु यह तूं दे आनाकानी ॥ छाड़त० ॥ टेक ॥ विषय न तजत न भजत बोध व्रत दुखसुखजाति न जानी। शर्म चहै न लहै शठ ज्यों घृत,—हेत विलोवत पानी ॥ छाड़त० ॥१॥ तन धन सदन

स्वजन जन तुझसों, यह परजाय विरानी। इन परनमन विनस उपजनसों, तैं दुख सुखकर मानी, छाड़त०॥ २॥ इस अज्ञानतैं चिरदुख पाये, तिनकी अकथ कहानी। ताको तज दृग ज्ञानचरन भज, निजपरणति शिवदानी, छाड़त० ॥३॥ यह दुर्लभ नरभव सुसंगलहि, तत्वलखावनबानी। 'दौल' न कर अब परमें ममता, धर समता सुखदानी, छाड़त० ॥ ४ ॥

१०७

हम तो कबहूं न हित उपजाये, सुकुलसुदेवसुगुरूसुसंगहित कारनपाय गमाये, हमतो० ॥टेक॥ ज्यों शिशु नाचत आप न माचत, लखनहार बौराये। त्यों श्रुतबांचत आप न राचत औरन को समुझाये, हम तो०॥१॥ सुजसलाहकी चाह न तज निज प्रभुतालखि हरखाये॥ विषय तजे न रजे निजपदमें, परपदअपद लुभाये। हम तो० ॥२॥ पापत्याग जिन जाप न कीन्हों, सुमन चापतपताये। चेतन तनको कहत भिन्न पर, देह सनेही थाये। हम तो०॥३॥ यह चिर भूल भई हमरी अब, कहा होत पछताये 'दौल, अजों भवभोगरचौ मति, यों गुरू बचन सुनाये, हम तो ॥४॥

१०८

हम तोकबहूं न निजगुनभाये, तननिज मान जान तनदुख-सुखमें विलखे हरखाये, हम तो ०॥टेक॥ तनको गरन मरन लखि तनको, धरनमान हम जाये। या भ्रमभौंर परे भवजल चिर, चहुंगतिविपत लहाये, हम तो। १॥ दरशबोधव्रत सुधा न चाख्यो विविधविषयविषखाये। सुगुरूदयाल सीखदई पुन पुन, सुन सुन उरनहिं लाये। हम तो ॥२॥बहिरातमता तजी, न अन्तरदृष्टि

न ह्वै निज ध्यायो धामकामधनरामाकी नित, आसहुतासजलाये। हम तो ॥३॥अचल अनूप शुद्धचिद्रूपी, सवसुखमय मुनि गाये। 'दौल' चिदानंद स्वगुण मगन जे,ते जीय सुखिया थाये,हम तो॥४।

१०९

हम तोकबहूं न निज घर आये परघर फिरत बहुत दिन बीते नाम अनेक धराये। हम तो० ॥टेक॥ परपदनिजपद मान मगन ह्वै, परपरणतिलपटाये। शुद्धबुद्ध सुखकंद मनोहर, चेतनभाव न भाये. हम तो ॥१॥ नरपशुदेव नरक निज जान्यो परजयबुद्धि लहायो। अमल अखंड अतुल अविनाशी आतमगुण नहिं गायो हम तो० ॥२॥ यह बहु भूल भई हमरी फिर कहा काज पछतायो। 'दौल' तजो अज हूं विषयन को सतगुरु वचनसुनायो। हम तो ।३॥

११०

मानत क्यों नहिं रे हे नर सीख सयानी।
भयो अचेत मोहमदपीके, अपनी सुधविसरानी, ॥ टेक ॥
दुखी अनादि कुबोध अव्रततैं, फिर तिनसों रति ठानी।
ज्ञानसुधा निजभाव न चाख्यो, परपरणतिमतिसानी, मा० ॥ १॥
भव असारता लखै न क्यों जहँ, नृप ह्वै कृमिविट थानी।
सधन निधन नृपदास स्वजन रिपु, दखिया हरिसे प्रानी, मा ०॥२।
देह येह गदगेह नेह इस है, बहु विपतिनिसानी।
जड़ मलीन छिनछीन करमकृत बंधन शिवसुखहानी, मान ०॥३
चाहज्वलन ईंधनविधिवनघन , आकुलता कुलखानी।
ज्ञानसुधासरशोषन रवि ये, विषय अमितमृतदानी, मानत० ॥ ४॥

यों लखि भवतनभोगविरचिकरि, निजहितसुन जिनबानी ।
तज रुषराग 'दौल' अब अवसर, यह जिनचंद्रबखानी ॥ म० ॥५॥

१११

जानत क्यों नहीं रे, हे नर आतमज्ञानी, जानत० ॥ टेक ॥
रागदोषपुद्‌गलकी संपति, निहचै शुद्धनिसानी, जानत० ॥ १ ॥
जाय नरकपशु नर सुरगतिमें, यह परजाय विरानी ।
सिद्धसरूप सदा अविनाशी, मानत विरले प्रानी, जान० ॥ २ ॥
कियो न काहू हरै न कोई, गुरुशिख कौन कहानी ।
जनममरनमलरहित विमल है, कीचविना जिम पानी, जा०॥३॥
सारपदारथ है तिहुंजगमें, नहिं क्रोधी नहिं मानी ।
'दौलत' सो घटमाहिं विराजै, लखि हूजै शिवथानी, जान० ॥ ४ ॥

११२

हे हितबांछक प्रानी रे कर यह रीति सयानी, हे हित० ॥ टेक ॥
श्री जिनचरनचितार धार गुण, परम विराग विज्ञानी, हे हित०॥१॥
हरनभयामय स्वपरदयामय, सरधो वृष सुखदानी ।
दुविध उपाधि बाध शिवसाधक, सुगुरु भजो गुणथानी, हे० ॥२॥
मोहतिमर हर मिहर भजो श्रुत, स्यातपद जास निशानी ।
सप्ततत्व नव अर्थ विचारहु, जो बरने जिनबानी, हे हित०॥ ३ ॥
निजपर भिन्न पिछान मान पुनि, होहु आप सरधानी ।
जो इनको विशेष जानन सो, ज्ञायकता मुनि मानी, हे हित० ॥४॥
फिर व्रत समिति गुपत सजि, अरु तज प्रवृत्ति शुभास्रवदानी ।
शुद्ध स्वरूपाचरन लीन ह्वै, 'दौल' वरो शिवरानी, हे हित० ॥५॥

११३

हे नर भ्रमनींद क्यों न छाड़त दुखदाई,
सोवत चिरकाल सोंज आपनी ठगाई, हेनर० ॥ टेक ॥
मूरख अघ कर्म कहा भेदै नहिं मर्म लहा,
लागै दुखज्वालकी न देहकै तताई, हे नर० ॥ १ ॥
जमके रव बाजते, सुभैरव अति गाजते,
अनेक प्रान त्यागते सुनै कहा न भाई, हे नर० ॥ २ ॥
परको अपनाय, आप रूपको भुलाय,
हायकरनविषय दारु जार चाहदौं बढ़ाई, हे नर० ॥ ३॥
अब सुन जिनबान रागद्वेषको जघान,
मोक्षरूप निज पिछान, 'दौल' भज विरागताई, हेनर० ॥ ४ ॥

११४

प्रभु थारी आज महिमा जानी, प्रभु थारी० ॥ टेक ॥
अबलों मोह महामद पिय मैं, तुमरी सुधि विसरानी ।
भाग जगे तुम शांति छबीलखि, जड़ता नींद विलानी, प्रभु० ॥१॥
जग विजयी दुखदाय रागरुष तुम तिनकी थिति भानी ।
शान्तिशुधासागर गुणिआगर, परमविराग विज्ञानी, प्रभु०॥२॥
समवशरण अतिशय कमलाजुत, पै निर्ग्रन्थ निदानी ।
क्रोधविना दुठ मोह विदारक, त्रिभुवन पूज्य अमानी, प्रभु० ॥३॥
एक स्वरूप सकलज्ञेयाकृत, जग उदास जग ज्ञानी ।
शत्रुमित्र सबमें तुम समहो जो दुखसुख फल थानी ॥ ४ ॥
परम ब्रह्मचारी है प्यारी, तुम हेरी शिवरानी ।
है कृतकृत्य तदपि तुम शिवमग, उपदेशक अगवानी ॥ ५ ॥

भइ कृपा तुमरी तुममें तैं, भक्ति सु मुक्ति निसानी ।
है दयाल अब देहु 'दौलको', जो तुमने कृत ठानी ॥ ६ ॥

११५

तुम सुनियो श्री जिननाथ अरज इक मेरी जी, तुम० ॥ टेक ॥
तुम विनहेत जगत उपकारी, वसु कर्मन मोहि कियो दुखारी ।
ज्ञानादिक निधि हरी हमारी, द्यावो सो ममफेरीजी, तुम सुनि०॥१॥
मैं निज भूल तिनहि संग लाग्यो, तिन कृत करणविषयरसपाग्यो।
तातैं जन्मजरादवदाग्यो, कर समता सम नेरीजी, तुम सु० ॥ २ ॥
वे अनेक प्रभु मैं जु अकेला, चहुंगति विपतिमाहिं मोहिं पेला ।
भाग जगे तुमसे भयो मेला, तुम हो न्याव निवेरीजी, तुम सु०॥३॥
तुम दयाल बेहाल हमारो, जगतपाल निज विरद समारो ।
ढील न कीजे बेग निवारो, दौलतणी भवफेरीजी तुम सु०॥४॥

११६

अरे जिय जग धोखेकी टाटी अरे० ॥ टेक ॥
झूठा उद्यम लोक करत हैं जिसमें निश दिन घाटी अरे० ॥१॥
जान बूझके अन्ध बने हैं आंखन बांधी पाटी अरे० ॥ २ ॥
निकलि जांयगे प्राण छिनकमें पड़ी रहैगी माटी अरे० ॥ ३ ॥
दौलतराम समझ मन अपने दिलकी खोल कपाटी अरे० ॥ ४॥

११७

जय वीरजिन वीरजिन जिचंद कलुषनिकंद मुनिहृदसुखकंद जय श्री० ॥ टेक ॥ सिद्धारथनंद त्रिभुवनको दिनेन्दचन्द जा वच किरन भ्रम तिमरनिकंद जय श्री० ॥ १ ॥ जाके पद अरविन्द सेवत सुरेन्द्र वृंद जाके गुण रटत कटत भवफन्द जय श्री० ॥ २ ॥

जाकी शांति मुद्रा निरखत हरखत रिखि जाके अनुभवत लहत चिदानन्द जय श्री० ॥ ३ ॥ जाके घातिकर्म विघटत प्रघटत भये अनन्तदरसबोधवीरज आनन्द जय श्री० ॥ ४ ॥ लोकालोकज्ञाता पैं स्वभावरत राता प्रभु जगको कुशलदाता त्राता पै अद्वंद जय श्री० ॥ ५ ॥ जाकी महिमा अपार गणी न सकै उचार 'दौलत' नमत सुख चहत अमंद, जय श्री० ॥ ६ ॥

जकडी ११८

अब मन मेरा वे सीखवचन सुन मेरा। भजि जिनवरपद व जो विनशै दुख तेरा ॥ विनशै दुख तेरा भववनकेरा मनवच तन जिनचरन भजो। पंचकरन वश राख सुज्ञानी मिथ्या मत मग दौर तजो॥ मिथ्यामतमगपगि अनादितैं तैं चहुं गति कीन्हा फेरा। अब हू चेत अचेत होहु मत सीखवचनसुनि मन मेरा ॥ १ ॥ इस भव वनमें वे तैं साता नहिं पाई। वसुविधिवश है वो तैं निज सुधि विसराई ॥ तैं निज सुधि विसराई भाई, तातैं विमल न बोध लहा। परपरणतिमें मग्न भयो तू जन्मजरामृत दाह दहा। जिन मत सार सरोवरकूं अब गाहि लागि निज चिंतन में। तौ दुख दाह नसै सब वातर फेर वसे इस भव वन में ॥ २ ॥ इमतन में तू वे क्या गुन देख लुभाया। महा अपावन वे सतगुरु याहि बताया ॥ सतगुरु याहि अपावन गाया मलमूत्रादिक का गेहा। कृमिकुलकलित लखत घिन आवै यासों क्या कीजे नेहा। यह तन पाय लगाय आपनी परणति शिवमग साधन में। तो दुखद्वंद्वनशै सब तेरा यही सार है इस तनमें ॥ ३ ॥ भोग भले न सही रोगशोकके दानी। शुभगति रोकन वे। दुर्गति पथअ-

अगवानी ॥ दुर्गतिपथअगवानी है जे जिनकी लगन लगी इनसों।
तिन नानाविधि विपति सही है, विमुख भयो निज सुख तिनसों ॥
कुन्जर झख अलि शलभ हिरन इन एक अक्षवश मृत्युलही ।
यातें देख समझ मनमाहीं भवमें भोग भले न सही ॥ ४ ॥
काज सरे तब बे जब निजपद आराधै । नशै भवावलि वें निरा-
बाधपद लाधै ॥ निराबाधपद लाधै तब तोहिं केवल दर्शन ज्ञान
जहाँ । सुख अनन्त अति इन्द्रियमंडित बीरज अचल अनंत
तहाँ ॥ ऐसो पदचाहै तो भजि जिन बारबार अब को उचरै ।
'दौल' मुख्यउपचारे रत्नत्रय जो सेव तो काज सरै ॥ ५ ॥

जकड़ी ११६

वृषभादि जिनेश्वरध्याऊं सारद अंबा चितलाऊं ।
द्वैविधिपरिग्रहपरिहारी, गुरु नमहुं स्वपरहितकारी ॥
हितकार तारक देव श्रुत गुरु परख निज उरलाइये ।
दुखदाय कुपथ विहाय शिवसुखदाय जिनवृष ध्याइये ॥
चिरतैं कुमगपगि मोहठगकर ठग्यो भवकानन पर्‌यो ।
व्यालीसद्विकलख जोनमें जरमरनजामन दों जर्‌यो ॥ १॥
जब मोहरिपु दोन्ही घुमरिया, तस बश निगोद में परिया ।
तहां स्वासएक के माहीं, अष्टादश मरनलहाही ॥
लहि मरनअन्तमुहूर्तमें, छ्यासठसहस शततीन हीं ।
षटतीसकाल अनंत यों दुख, सहे उपमा ही नहीं ॥
कबहूं लहीं वर आयु क्षितजलपवन पावक तरुतणी ।
तस भेद किंचित कहूं सो सुन कह्यो जो गौतम गणी ॥ २ ॥

पृथिवी द्वय भेद बखाना, मृदु माटी कठिन पखाना।
मृदुद्वादश सहस वरष की पाहन बाईस सहसकी॥
पुनि सहस सात कही उदकत्रय सहसवर्ष समीरकी।
दिनतीन पावक दशसहस तरु प्रमित नाम सुपीरकी॥
विनघात सूक्षम देहधारी घातजुत गुरुतन लह्यो।
तहं खनन तापन जलन व्यंजन, छेदभेदन दुख सह्यो॥ ३॥
शखादि दुइन्द्री प्राणी, थिति द्वादश बरस बखानी।
यूकादि तेइंद्री हैं जे बासर उञ्चास जिये ते॥
जीवै छमासअलीप्रमुख, व्यालीससहस उरगतनी।
खगकी बहत्तरसहस नवपूर्वांग सरिसृपकी भनी॥
नर मत्स्य पूरवकोट की थिति, करमभूमि बखानिये।
जलचर विकल विन भोगभूनरपशुत्रिपल्य प्रमानिये॥ ४॥
अघवशकर नरक बसेरा, भुगते तहं कष्ट घनेरा।
छेदे तिलतिल तन सारा, क्षेपै द्रहपूति मंझारा॥
मंझारवज्रानिलपचावैं, धरहिं शूली ऊपरें।
सींचै जु खारे वारिसों, दुठ कहैं व्रण नीके करें॥
बैतरणि सरिता समल जल अति, दुखद तरु सेंवलतने।
अति भीम वनअसिकांतसम दल, लगत दुख देवैं घने॥ ५॥
तिस भूम हिम गरमाई, सुरगिरसम अस गलजाइ।
तामें थिति सिंधुतनी है, यों दुखद नरक अवनी है॥
अवनी तहांकीतैं निकसि कबहू जनम पायो नरो।
सर्वाङ्ग सकुचित अति अपावन, जठर जननीके परो॥

तहं अधोमुख जननी रसांश थकी जियो नवमास लों।
ता पीरमें को सीर नाहीं, सहे आप निकास लों ॥ ६ ॥
जनमत जो संकट पायो, रसनातें जात न गायो।
लहि बालपनैं दुखभारी, तरुनापो लयो दुख कारी ॥
दुखकार इष्टवियोग अशुभ, संयोग सोग सरोगता।
परसेब ग्रीषम सीत पावस, सहै दुख अति भोगता ॥
काहू कुतिय काहू कुबांधव, काहू सुता व्यभिचारिणी।
किसहू विसनरत पुत्र दुष्ट, कलत्र कोऊ परऋणी ॥ ७
बृद्धापनके दुख जेते, लखिये सब नयनन तेते।
मुखलाल बहे तन हालै, बिन शक्ति न बसन सँभालै ॥
न संभाल जाके देहकी तो, कहो बृषकी का कथा।
तबही अचानक आन जम गह मनुज जन्म गयो बृथा ॥
काहू जनम शुभठान किंचित, लहो पद चहु देवको।
अभियोग किल्विष नाम पायो, सह्यो दुख पर सेवको ॥ ८ ॥
तहँ देख महत सुरऋद्धी, झूरयो विषयन करि गृद्धी।
कबहूं परिवार नसानो, शोकाकुल ह्वै बिललानो ॥
बिललाय अति जब मरन निकटो, सह्यो संकट मानसी।
सुरविभव दुखद लगी जबै, तब लखी माल मलानसी ॥
तबही जु सुर उपदेश हित, समझाइयो समुझ्यो न त्यों।
मिथ्यात्वयुत च्युत कुगति पाई, लहै फिर सो स्वपद क्यों ॥ ९ ॥
यों चिरभव अटवी गाही, किंचित साता न लहाही।
जिनकथित धरम नहिं जान्यो, परमांहिं अपनपो मान्यो ॥

मान्यो न सम्यक त्र्यातम, आतम अनातममें फस्यो ॥
मिथ्याचरन दृगज्ञानरंज्यो, जाय नवग्रीवक बस्यो ॥
पैं लह्यो नहिं जिनकथित शिवमग, वृथा भ्रमभूल्यो जिया।
चिदभावके दरसाव विन सब, गये अहले तप किया ॥ १० ॥
अब अद्भुत पुण्य उपायो, कुल जात विमल तू पायो।
यातैं सुन सीख सयाने, विषयनसों रति मति ठाने ॥
ठाने कहा रति विषयमें, ये विषम विषधरसम लखो।
यह देह मरत अनंत इनको, त्याग आतम रस चखो ॥
या रस रसिक जन बसे शिव अब, बसें पुनि बसि हैं सही।
'दौलत' स्वरुचि परविरुचि सतगुरुसीख नित उर धर यही ॥ ११ ॥

होली १२०

ज्ञानी ऐसी होली मचाई० ॥ टेक ॥ राग कियो विपरीत विपन घर, कुमति कुसौति सुहाइ। धार दिगंबर कीन्ह सुसंवर, निजपद भेद लखाई। घात विषयनकी बचाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥१॥ कुमति सखा भजि ध्यान भेद सम, तन में तान उड़ाई। कुंभक ताल मृदंगसौं पूरक, रेचक बीन बजाई। लगन अनुभवसौं लगाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥ २ ॥ कर्मबलीता रूप नाम अरि. वेद सुइन्द्रि गनाई। दे तप अग्नि भस्म करि तिनको, धूल अघाति उड़ाई। करी शिव तियकी मिलाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥ ३ ॥ ज्ञानको फाग भागवश आवै, लाख करो चतुराई। सो गुरु दीन दयाल कृपाकरि, 'दौलत' तोहिं बताई। नहीं चितसे बिसराई ॥ ज्ञानी ऐसी होली मचाई ॥ ४ ॥

होली १२१

मेरो मन ऐसी खेलत होरी ॥ टेक ॥ मन मिरदंग साजकरि त्यारी, तनको तमूरा बनोरी। सुमति सुरंग सरंगी बजाई, ताल दोऊ कर जोरी। राग पांचौं पद कोरी ॥ मेरो मन० ॥ १ ॥ समकृत रूप नीर भर झारी, करुणा केशर घोरी। ज्ञानमई लेकर पिचकारी, दोउ करमाहिं सम्होरी। इन्द्रि पांचौं सखि चोरी ॥ मेरो मन० ॥ २ ॥ चतुर दानको है गुलाल सो, भरि भरि मूठि चलोरी। तपमें बांकी भरी निज झोरी ॥ यशको अबीर उड़ोरी रंग जिन धाम मचोरी ॥ मेरो मन० ॥ ३ ॥ 'दौल' बाल खेलें अस होरी, भव भव दुःख टलोरी। सरनाले इक श्री जिन कोरी ॥ जग में लाज हो तोरी। मिलै फगुआ शिवगोरी। मेरा मन० ॥ ४

१२२

निरखत जिनचंद री माई ॥ टेक ॥ प्रभुदुति देख मंद भयौ निशिपति, आन सु पग लिपटाई। प्रभु सुचंद वह मंद होत है, जिन लखि सूर छिपाई। सीत अद्भुत सो बताई ॥ निरखत जिन० ॥ अंबर शुभ्र निजंतर दीसै, तत्वमित्र सरसाई। फैलि रही जग धर्म जुन्हाई चोर न चार लखाई। गिरा अमृत जो गनाई ॥ निरखत जिन ० ॥ २ ॥ भये प्रफुल्लित भव्य कुमुद मन, मिथ्यातम सो नसाई। दूर भये भवताप सबनिके, बुध अंबुध सो बढ़ाई। मदन चकबेकी जुदाई ॥ निरखत जिन० ॥ ३ ॥ श्रीजिनचंद बंद अब दौलत, चितकर चंद लगाई। कर्मबंध निर्बंध होत हैं, नागसुदमनी लसाई। होन निर्विष सरपाइ ॥ निरखत जिन ० ॥ ४ ॥